चन्दामामा
दिसम्बर १९८२

GOLD SPOT
WALT DISNEY'S
Jungle Book
Crown Collection

**पुरस्कार जीतिए**

**कॅमल**

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (२) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५
१० प्रमाणपत्र
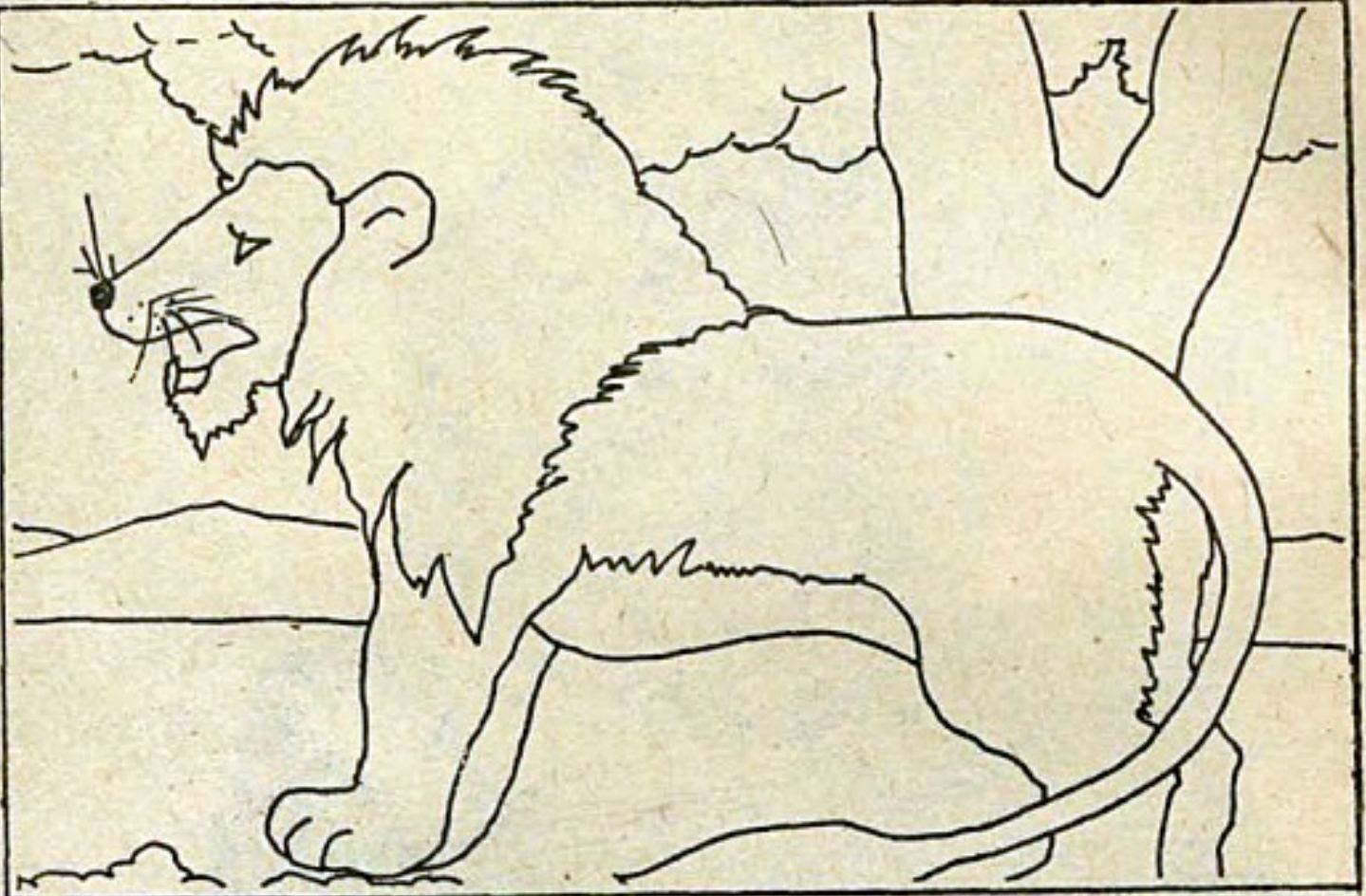
इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ६६२८, कुलाबा, बम्बई ४०० ००५.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name: .................................................. Age: ....................

Address: ..................................................................

..................................................................

प्रवेशिकाएं 31-12-1982 से पहले पहले भेजी जायें.

**CONTEST NO 27**

Vision HIN

# चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

विद्या मानव के भीतर विनय तथा विवेक को बढ़ाने वाली होनी चाहिए। ऐसा न होकर यदि वह मनुष्य के अन्दर अहंकार पैदा करने का कारणभूत बन जाती है तो श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर पंडित भी पामर के हाथों में पराजित हो जाता है। इसका उत्तम उदाहरण "विदूषक के सवाल" नामक कहानी है।

## अमर वाणी

शरदि न वर्षंति गर्जंति, वर्षंति वर्षासु निस्वनो मेघः।
नीचो वदति न कुरुते, न वदति सुजनः करोत्येव ॥

[शरतकाल का मेघ गरजता है, पर बरसता नहीं। वर्षाऋतु का मेघ गरजे बगैर बरसता है! इसी प्रकार नीच व्यक्ति आश्वासन देकर चुप रह जाता है और सज्जन व्यक्ति कहे बगैर उत्तम कार्य करके दिखाता है।]

वर्ष : ३५ दिसम्बर १९८२ अंक : ४

एक प्रति : १-७५ :: वार्षिक चन्दा : २१-००

# कुएँ का पैसा

कनकगुप्त एक महाजन था। लोगों का विश्वास था कि उसके यहाँ बहुत सारा धन और गहने हैं। यह खबर सुनकर एक चोर ने कनकदास के घर में सेंध लगाने का निश्चय किया। अपना काम सरल बनाने के ख्याल से चोर साधू का वेष धर कर कनकदास के घर पहुँचा।

कनकदास साधू और सन्यासियों के प्रति बड़ा आदर भाव रखता था। उनके प्रति गहरा विश्वास भी रखता था। उस ने कपट साधू का श्रद्धा पूर्वक आदर-सत्कार किया।

चोर ने कनकदास के सत्कार के प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट की, फिर अपनी नकली दाढ़ी संवारते हुए बोला–"मैं तुम्हारे सत्कार पर प्रसन्न हूँ, इस के बदले में मैं तुम्हारा उपकार करना चाहता हूँ। बहुत जल्दी तुम्हारे घर में चोरी होने वाली है। यदि तुम अपने धन की रक्षा करना चाहते हो तो उसे बड़ी हिफ़ाज़त के साथ किसी पेटी में रखकर पिछवाड़े के कुएँ में डाल दो। एक महीने बाद फिर उसे निकाल लो।"

कनकदास ने साधू के सामने हामी भर दी, उसके चले जाने के बाद पत्नी से इस बारे में सलाह मांगी। उसने साधू के कहे मुताबिक़ करने की राय दी।

कनकदास के घर में एक ऐसी गुप्त जगह थी जिसकी जानकारी कनकदास को छोड़ घर के किसी व्यक्ति को न थी। वहाँ छिपाने पर धन के चोरी हो जाने का कोई डर न था। इसलिए कनकदास ने अपना धन वहाँ पर छिपाया और एक खाली पेटी को कुएँ में डाल पिया। अपनी पत्नी से भी झूठ मूठ कह दिया कि सारा धन पेटी में छिपा रखा गया है।

"वसुंधरा"

कनकदास की पत्नी के पेट में कोई बात नहीं पचती। इसलिए दूसरे ही दिन सारे गांव में यह खबर फैल गई कि उन लोगों ने कुएँ में धन छिपा रखा है।

दूसरे दिन रात को चोर दीवार फांद कर पिछवाड़े के कुएँ के पास पहुँचा तो देखता क्या है, वहाँ पर तीन आदमी आपस में झगड़ा कर रहे हैं।

वे तीनों चोर थे। कनकदास के द्वारा अपने कुएँ में धन छिपाने की खबर उन चोरों के कानों में पड़ी, इस पर वे एक-एक करके कुएँ के पास पहुँचे और आपस में लड़ने लगे।

उसी वक़्त चौथा चोर वहाँ पहुँच कर बोला—"दर असल कनकदास को धन कुएँ में डालने की सलाह मैं ने दी है, तुम लोग नाहक़ इस बात को लेकर झगड़ा क्यों करते हो?" इसके बाद उसने सलाह दी कि आपस में लड़ने से हम्हीं लोगों का नुक़सान होगा, इसलिए हम चारों आपस में कोई समझौता कर लेंगे।"

ये बातें सुन सबसे बड़ा चोर बोला—"इस बात में कोई शाक नहीं कि कनकदास बहुत बड़ा अमीर है। इसलिए उसने काफी धन कुएँ में डाल दिया होगा। हम लोग आपस में लड़ना बंदकर उसे बराबर बांट लेंगे।"

उस का सुझाव सब चोरों को पसंद आया। वे लोग कुएँ से धन निकालने के वास्ते पहले ही अपने साथ रस्से लाये थे। उन में से एक रस्सा कुएँ के बाजू के पेड़ से बांध दिया गया और उस के दूसरे छोर को कुएँ में सरका दिया। उस की मदद से एक चोर कुएँ में उतर गया।

कुआँ बड़ा गहरा था। पानी में चोर को एक पेटी दिखाई दी। चोर ने उस पेटी को रस्से से कसकर बांध दिया और वह ऊपर चला आया। इस के बाद चारों चोरों ने रस्सा पकड़ कर पेटी को बाहर खींच लिया। पेटी पर ताला लगा था। चोरों में से एक ताला खोलने में बड़ा प्रवीण

था । उसने बड़ी कुशलता के साथ मिनटों में ताला खोल दिया । सब ने खुशी में आकर पेटी खोल दी, पर उसमें धन न था, बल्कि एक भूत हंसते हुए बाहर निकल आया ।

भूत को देखते ही चारों चोर थर-थर कांपने लगे, इस पर भूत ने उन्हें समझाया— "भाइयो, तुम लोग डरो मत, मैं तुम्हारी कोई हानि न करूंगा ।" भूत के मुंह से ये बातें सुनकर चोर विस्मय में आ गये, इस कारण उनके पैरों ने भागने से पहले ही जवाब दे दिया था, इसलिए वे चकित हो खड़े रह गये । भूत ने कहना शुरू किया—"कल इस उजड़े कुएं में एक पेटी गिर पड़ी । मेरे आराम करने केलिए वह बड़ी अच्छी जगह मालूम हुई । इसलिए मैं पेटी में घुस कर लेट गया । यह बड़ा अच्छा हुआ, फिर तुम लोगों की मेहरबानी से मैं बाहर निकल आया । इस उपकार के बदले में मैं तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ, माँग लो, तुम लोग क्या चाहते हो ?"

भूत के मुंह से सहानुभूति भरी बातें सुनने पर एक चोर की हिम्मत बंध गई । वह बोला—"दर असल तुम कौन हो ? इस कुएँ में कितने दिनों से रहते हो और क्यों आज तक बाहर निकल न पाये ?"

चोर के मुंह से ये सवाल सुन कर भूत हंसकर बोला—"यह तो बड़ी राम कहानी है, मैं उसे संक्षेप में सुनाता हूँ—"कनकदास के दादा के जमाने में हम लोग उसके पड़ोसी थे । लोगों में यह अफवाह फैल गई थी कि मेरे दादा ने इस कुएं में खजाना छिपा रखा है । एक दिन मैं सबकी आँख बचा कर इस कुएँ में कूद पड़ा । कुएँ के तल में एक खजाना जरूर था । एक बक्से में हीरे, लाल, मानिक वगैरह रत्न भरे थे । मगर उन रत्नों को लेकर मैं बाहर कैसे निकलूं ? मैं वहीं पर मर कर भूत बन बैठा । मैं बहुत कोशिश करके भी दस फुट से ज्यादा ऊंचाई तक उछल न पाया । इसलिए कई सालों से मैं इसी कुएँ के अन्दर रह गया; इतने साल बाद तुम लोगों ने

मुझे कुएँ से बाहर निकाला, इसीलिए मैं तुम लोगों की मदद करना चाहता हूँ।"

"तुम किस प्रकार से हमारी मदद कर सकते हो?" एक चोर ने पूछा।

"तुम लोग जो भी चीज़ माँगो, मैं लाकर तुम्हें दे सकता हूँ।" भूत ने कहा।

"तब तो क्या कुएँ से धन ला सकते हो?" एक चोर ने पूछा।

"तुम लोग कुएँ में उतर कर खजाने वाले बक्से को रस्से से बांध दो। मैं भारी से भारी चीज़ को भी ऊपर खींच सकता हूँ।" भूत ने समझाया।

खजाने की सचाई का पता लगाने के लिए एक चोर कुएँ में उतर गया। पानी में डूब कर खोजा। उसे एक भारी बक्सा दिखाई दिया। उसे जल के उपरि तल तक उठा कर देखा। बक्से में हीरे, वैडूर्य आदि चमक रहे थे। मगर वह खुद पूरे बक्से को ऊपर खींच न पाया।

रस्से की मदद से चोर कुएँ के बाहर आया, उसने बाक़ी तीनों चोरों को रत्नों की बात बताई। इस पर वे चारों चोर कुएँ में उतर कर खजाने वाले बक्से को रस्से से बांधने की बात सोचने लगे।

जब चारों चोर कुएँ में उतरने को हुए तब भूत ने उन लोगों से पूछा—"एक हीरे को बेचने पर तुम चारों सारी जिंदगी आराम से काट सकते हो, ऐसी हालत में बाक़ी सारा धन तुम लोग क्या करोगे?"

"धन की रुचि के बारे में तुम जानते ही क्या हो? उसे बराबर देखते रहने पर युग भी क्षणों के बराबर बीत जाते हैं।" चोरों ने कहा।

इसके बाद जब चारों चोर कुएँ में उतर गये, तब भूत ने रस्से के टुकडे–टुकड़े कर दिये, उन टुकडों को दूर फेंककर हँसते हुए बोला—"तुम लोगों ने लोभ में पड़कर मेरी बातों पर ध्यान नहीं दिया। मैं अपने रास्ते चला जाता हूँ। तुम लोग अपनी क़िस्मत के भरोसे रह जाओ।" यों कहकर वह भूत तालाब के किनारे स्थित

ताड़ों के बगीचे में चला गया। अपनी इस बुरी हालत पर चोर घबरा गये। कुएँ में बहुत बड़ा खजाना तो उनके हाथ लगा, मगर उसे ऊपर लाने का उन्हें कोई उपाय नहीं सूझा।

बड़े चोर ने कहा–"हमने भूत की अच्छी सलाह पर ध्यान नहीं दिया, इसलिए मुसीबत में फँस गये। यदि कोई आकर हमें न बचावे तो हम लोग भी मर कर भूत बन जायेंगे।"

इस पर कनकदास को धन कुएँ में छिपाने की सलाह देने वाला चोर ऊँची आवाज़ में चिल्ला उठा–"हम को बचा लो। हम को बचा लो।"

यह चिल्लाहट सुन कर कनकदास के साथ अड़ोस-पड़ोस के लोग कुएँ के पास आ पहुँचे। कुएँ के भीतर वाले चोरों को देख पूछा–"अबे, तुम लोग इस उजड़े हुए कुएँ में क्यों उतर गये? तुम लोग सच सच बतला दो, वरना हम तुम्हें बाहर नहीं निकालेंगे।"

"महाशयो, यहाँ पर एक भारी बक्से में खजाना भरा है। आप लोग कुएँ में रस्से डाल दीजिए, हम बक्सा उस के साथ बांध देंगे। उस के साथ हम भी बाहर निकल आयेंगे।"

खजाने की बात सुनते ही वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों मे से एक आदमी दौडा-दौडा चला गया और उस गाँव के मुखिये को बुला लाया। मुखिये ने रस्से कुएँ में गिरवा कर चोरों को बाहर खिंचवाया। वे लोग अपने साथ जो खजाना लाये उसे देख गाँव के सब लोग आश्चर्य में आ गये।

कनकदास लोभ भरी नज़र डाल कर कुछ कहने को हुआ। इस पर मुखिया बोला–"यह खजाना गाँव के सारे लोगों का है। इसे मैं गांव की भलाई के काम में लाऊँगा। बाद को सोच लेंगे कि चोरों को कैसी सजा दी जाय। तुम लोग अभी खजाने वाले इस बक्से को गाँव की कचहरी के पास ले आओ।" यों कहकर मुखिया वहाँ से चल पड़ा।
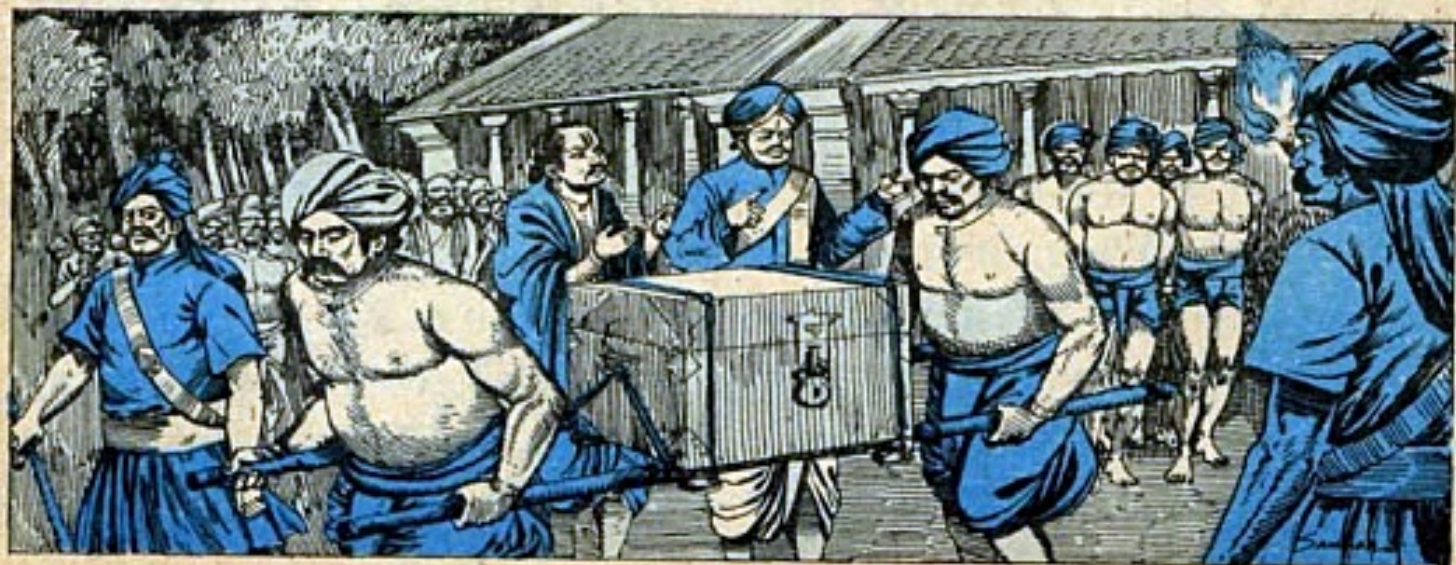
[१३]

[नरवाहन की सेना तथा भील युवकों के बीच जो लड़ाई हुई, उसमें नरवाहन के सैनिकों ने भील युवकों का संहार करके शिथिल दुर्ग पर कब्ज़ा कर लिया। शिवदत्त अपने अनुचरों के साथ समुद्र पर चल पड़ा। रास्ते में उन्हें मंदरदेव दिखाई दिया। थोड़ी देर बाद उन्हें दूर पर रोशनी दिखाई दी; इस पर वे लोग नावों को उस दिशा में ले गये। बाद–]

उस घने अंधकार में शिवदत्त और मंदरदेव की नावें धीरे-धीरे रोशनी की दिशा में आगे बढ़ीं। तब तक दो-तीन दिनों से अन्न-जल और निद्रा से दूर उनके छे अनुचर महा समुद्र पर पतवारों की मदद से नावें खेने लगे।

"शिवदत्त, मुझे भूख सता रही है। मैं सहन नहीं कर पाऊँगा। शायद आप लोग भी भूख के मारे परेशान होंगे। हमें कोई न कोई उपाय करना ही होगा। भूख की हालत में बेचारे ये लोग भी नावें कैसे चला सकते हैं?" यों कहते मंदरदेव शिवदत्त की ओर नजर दौड़ाकर बोला–"हमारे अनुचरों की भी यही हालत है। इसमें ज़रा भी शक नहीं है कि रोशनीवाला वह प्रदेश जरूर कोई न कोई टापू होगा। लेकिन अब समस्या यह है कि वह प्रदेश मानवों के लिए निवास करने लायक़ है या नहीं?"

शिवदत्त की बातों का मंदरदेव ने कोई जवाब न दिया। उसके दिमाग में अचानक मराल द्वीप, वहाँ की प्रजा, अपने राज्य को खोने की घटना—ये सारी बातें बिजली की भांति झलक गईं। इसकी कल्पना मात्र से मंदरदेव का सारा शरीर सिहर उठा।

उस हालत में गहरी सांस लेकर मंदरदेव बोला—"शिवदत्त, मैंने तुम्हारे मन की बात भांप ली है। मैं इस भयंकर देश में क़दम रखने से नहीं डरता। यही नहीं, मेरे बदन में जान के रहते मैं नरवाहन के द्रोह को कभी भूल नहीं सकता। मैं फिर से अपने राज्य पर क़ब्जा करने की पूरी कोशिश करूँगा; पर मुझे समय की प्रतीक्षा करनी होगी।"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ। यदि वह टापू हमारे निवास योग्य न हो तो हम इस ज़िंदगी में अब कुछ भी साध नहीं सकते, हमें क़िस्मत का भरोसा करके आगे बढ़ना है!" यों कहते शिवदत्त हंस पड़ा। थोड़ी देर बाद गंभीर स्वर में बोला—"हमारे जीवन का लक्ष्य यह कदापि नहीं है कि कहीं न कहीं किसी रूप में हम अपने पेट भरते ज़िंदगी गुज़ार दे। आप तो पदच्युत महाराज हैं। मैं महा सेनापति समरसेन का अनुचर हूँ। हम दोनों एक दुष्ट व्यक्ति की वजह से इस समुद्र में भटक रहे हैं। उसने हम लोगों के साथ बड़ी भारी मक्कारी की है।"

मंदरदेव की बातों से शिवदत्त बड़ा खुश हुआ। शिवदत्त ने अच्छी तरह से समझ लिया कि नरवाहन ने मंदरदेव के साथ जो द्रोह किया है, उसे वे कभी भूल नहीं सकते। इस संबंध में वह अपने विचार मंदरदेव से बताने ही जा रहा था, तभी नाव खेनेवाले सिपाही अचानक चिल्ला उठे—"यह सारा प्रदेश पहाड़ी शिलाओं से भरा हुआ है। हम लोग किसी द्वीप में पहुँच गये है। इस अंधेरे में शिलाओं से बचाकर नावों को खेना मुमकिन नहीं है।"

इस पर शिवदत्त ने अपने अनुचरों को नावों को उसी स्थान पर रोकने का आदेश दिया। उसने समुद्र तट की ओर नज़र दौड़ाई, तट पर उसे घने वृक्षों के समूह दिखाई दिये। वैसे वे लोग किसी द्वीप में तो जरूर पहुँच गये हैं, मगर उस अंधेरे में नावों को तट पर ले जाना खतरे से खाली न था।

उस प्रदेश में समुद्र जल के बीच ऊपर झांकनेवाली पहाड़ी चोटियां फैली हुई हैं। लहरों के थपेड़े खाकर यदि कोई भी नाव उन चोटियों से टकरा गई तो वह टुकड़े-टुकड़े हो समुद्र में बह जाएगी और उनकी जानें खतरे में पड़ जाएँगी।

"मंदरदेव, हमारी समुद्री यात्रा समाप्त हो गई है। सामने तट से लगकर हवा में सर हिलानेवाले पेड़ों का समूह आप देख ही रहे हैं। इस अंधेरे में इन शिलाओं के बीच से सुरक्षित रूप में नावों को तट पर ले जाना असंभव है।" शिवदत्त ने कहा।

मंदरदेव ने विस्मय में आकर पूछा– "तब तो क्या तुम सूर्योदय तक यहीं पर रहने का विचार रखते हो?"

शिवदत्त ने स्वीकृति सूचक सर हिला कर कहा–"यह भी तो उचित मालूम नहीं होता, अगर यह द्वीप किन्हीं असभ्य

जातियों का निवास हो तो दिन की रोशनी में वे लोग हमें पहचान कर हमारा अंत कर सकते हैं। इसलिए अंधेरे के रहते हम लोग तट पर पहुँचकर वहाँ की हालत जान लें, तो बड़ा ही अच्छा होगा। यदि किसीने हमारा सामना किया तो अंधेरे में खतरे से बच जाना कोई मुश्किल न होगा।"

शिवदत्त के विचारों से मंदरदेव सहमत हुआ। इसके बाद वे दोनों नावें वहाँ पर पानी में डूबी पहाड़ी चोटियों से बाँध दी गई। वहाँ से किनारे पर पहुँचना है तो लगभग सौ हाथ दूरी तक कंठ तक के जल में तैरकर जाना होगा। समुद्र के किनारे

लहरें कई गज ऊंचाई तक उठ रही थीं; इसलिए सबने भांप लिया कि बिना खतरे के किनारे पर पहुँचना नामुमकिन है।

थोड़ी देर तक आपस में मंत्रणा करने के बाद सब लोग कमर कसकर पानी में कूद पड़े। उत्ताल तरंगें उन्हें शिलाओं पर फेंकने लगीं। बड़ी कुशलता के साथ उनसे बचते हुए तैरकर आखिर वे सब किनारे जा पहुँचे। भीगे वस्त्रों को अलग फेंककर अपने साथ गठरी बांध कर लाये हुए सूखे वस्त्र पहन लिये। फिर भी वे सब ठण्ड के मारे थर-थर कांप रहे थे। एक सैनिक ने शिवदत्त के पास पहुँच कर पूछा– "इस ठण्ड से बचना है तो अलाव जलाना होगा, क्या सूखी लकड़ियाँ बीन लाऊँ?"

"अच्छी बात है। अगर यह द्वीप किसी नर माँस भक्षी लोगों की निवास भूमि हो तो हम लोग उन्हें लपटों में भून कर खा जायेंगे।" ये शब्द कहते शिवदत्त हँस पड़ा।

"हमारे हाथ में जो तेज धारवाली तलवारें और धनुष्य-बाण जो हैं......" मंदरदेव कुछ और कहने जा रहा था, शिवदत्त उसे टोकते हुए बोला–"मंदरदेव, आप इन टापुओं और यहाँ बसनेवाली जंगली जातियों के बारे में शायद ज्यादा जानकारी नहीं रखते। ये लोग इतने भोले हैं कि डर क्या चीज होता है, यह भी नहीं जानते। मगर आप अपनी तलवार से एक का सिर काटेंगे तो उसके

पीछे से एक साथ छे आदमी आप पर हमला कर बैठेंगे। इन लोगों के भीतर न प्राणों का मोह है और न ये लोग प्राणों का मूल्य ही जानते हैं।"

इस बीच सैनिकों ने सूखी लकड़ियाँ इकट्ठा कर आग सुलगाई। सब लोग उसके चारों तरफ़ बैठ कर हाथ-पैर सेंकने लगे। शिवदत्त सोचने लगा कि वह किस प्रकार के द्वीप में पहुँच गया है और आगे जाकर उसे किस तरह के खतरों का सामना करना पड़ेगा। पर मंदरदेव के दिमाग में ऐसा कोई विचार न था। उसका विचार सिर्फ़ यही था कि सूर्योदय के होने पर उसकी रोशनी की मदद से द्वीप का सारा हाल समझा जा सकता है।

अचानक उन्हें कुत्ते के भूंकने की आवाज़ सुनाई दी। शिवदत्त के साथ सब लोग एक ही साथ चौंक पड़े और सबने आवाज़ की दिशा में अपनी नज़र दौड़ाई। मंदरदेव ने भी थोड़ी देर उस दिशा में परख कर देखा, फिर शिवदत्त को संबोधित कर बोला—"शिवदत्त, जैसे हम लोग इसे असभ्य जातियों का द्वीप मानकर डरते हैं, यह वैसा भयंकर द्वीप मालूम नहीं होता। कुत्ते को पालतू बनाकर उययोग में लाने का तरीक़ा सिर्फ़ सभ्य मानव ही जानते हैं!"

"मंदरदेव, आप भूल कर रहे हैं।" यों कहते शिवदत्त हंस पड़ा—"मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है कि कई असभ्य

जातियों ने चीतों को पालतू बनाकर शिकार खेलने में उपयोग किया है। शायद यह बात मैंने पहले ही आपको बताई है! अब हमने जिस कुत्ते की भूंक सुनी, वह किसी जंगली कुत्ते की भूंक भी हो सकती है! सूर्योदय के हो जाने पर ही हमें इसका..."

शिवदत्त की बात पूरी न हो पाई थी, पेड़ों की डालों के बीच में से एक बड़ा पत्थर तेजी से आया और अलाव के पास बैठे एक सैनिक की पीठ पर लगा। सैनिक चीख कर आगे की ओर गिर गया। दूसरे ही क्षण मंदरदेव ने कमान पर तीर चढ़ा कर उस पत्थर के आने की दिशा में छोड़ दिया।

कुछ ही क्षणों में शिवदत्त को भी भयकंपित करने वाला विकृत मानव-स्वर सुनाई दिया, जो पीड़ा से भरा था। इस पर सब लोग एक दूसरे के चेहरे देख विस्मय में आ गये। उनमें से कुछ लोग सहम गये थे! वह द्वीप निर्जन नहीं था। कोई भयंकर कुछ क्रूर मानव जातियाँ वहाँ पर निवास करती हैं। इसको साबित करते पहली बार उन्हें वह विकृत मानव स्वर सुनाई दिया!

मंदरदेव ने तलवार खींच कर आगे चलते हुए सैनिकों को भी उनका अनुसरण करने का आदेश दिया। पर शिवदत्त उसे रोकते हुए बोला—"मंदरदेव, आप का यह काम खतरे से खाली नहीं है! हम इस प्रदेश के लिए एकदम नये हैं। इस अंधेरे में हम नहीं जानते कि न मालूम किस पेड़ या झाड़ी के पीछे कैसा भयंकर खतरा छिपा हुआ है!"

इसके जवाब में मंदरदेव बोला—"हम पर पत्थर फेंकनेवाला चाहे कोई भी क्यों न हो, मैंने उसे मेरे तीर से घायल बनाया है! तीर के लगते ही वह विकृत रूप से चिल्ला उठा है! अगर वह अब तक ज़िंदा हो तो, उसके जरिये हम इस द्वीप के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।"

पर शिवदत्त मंदरदेव के विचार से सहमत न हुआ। उसने समझाया–"हमें इस बात का पता नहीं है कि आपके तीर का शिकार होकर वह व्यक्ति घायल हो गया है या मर गया है। साथ ही यह भी हमें पता नहीं है कि वह अकेला है या उसके साथ और भी लोग हैं! इसलिए मेरा विचार है कि सूर्योदय तक हमें इसी जगह पर रहना सब प्रकार से श्रेयस्कर है। आप भी फिर से सोच लीजियेगा।"

शिवदत्त के सुझाव के स्वीकृति–सूचक रूप में सब ने सर हिलाये। इसके बाद नींद की खुमारी में ऊँघने वाले लोग सो गये, तब शिवदत्त तथा एक और सैनिक पहरे पर बैठ गये।

पूरब में सूरज के उगने तक उस प्रदेश में कोई उल्लेखनीय दुर्घटना न हुई। सवेरा होने पर मंदरदेव तथा सैनिकों की भी आँखें खुलीं। तब जाकर उन्हें विदित हुआ कि वे लोग जिस प्रदेश में हैं, वह एक घना जंगल है। आसमान को छूने वाले लंबे-लंबे वृक्ष, उनके तनों पर अस्त-व्यस्त फैले हुई बेल व लताएँ हैं, चिल्लाते, रेंगते व उड़ने वाले तरह-तरह के पक्षी–इन सब के कारण वहाँ का वातावरण अत्यंत डरावना लग रहा था!

शिवदत्त शांति भंग करते हुए उच्च स्वर में बोला–"मंदरदेव, रात को हमने जिस कार्य को अधूरा छोड़ रखा है, उस में अब हम लोग प्रवृत्त हो सकते हैं! आप शायद इस रोशनी में बता सकते हैं कि आप का तीर किस दिशा में जाकर लगभग कितनी दूरी में उस विकृत कंठवाले को घायल कर चुका है।"

शिवदत्त के मुँह से ये शब्द निकलने की देरी थी कि मंदरदेव वहाँ से चल पड़ा। पेड़ों की लताओं और झाड़ियों से बचते सब लोग सौ गज ही चल पाये थे कि उन्हें वहाँ पर हरे पत्तों पर खून के धब्बे दिखाई दिये।

(और है)

# सही चुनाव

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–" राजन, आपकी लगन और कार्य साधन के प्रति अचंचल विश्वास को देखने पर मेरे मन में यह जानने का सहज ही कौतूहल पैदा हो रहा है कि आप कहाँ तक बुद्धिमान और ज्ञानी हैं। यदि आप किसी यशस्वी राजा या चक्रवर्ती के आदेश पर यह श्रम उठा रहे हैं तो यह कहना कठिन हो जाएगा कि आप के इस कार्य में सफलता मिलने पर वे लोग आप की इस शक्ति और सामर्थ्य का कहाँ तक मूल्यांकन करेंगे! ऐसे कार्यों में पहले ही सावधान रहने के हेतु चेतावनी के रूप में आप को मैं वीरकेतु और अमर सेन नामक दो क्षत्रिय युवकों की कहानी सुनाना

## वेताल कथाएँ

चाहता हूँ! कृपया श्रम को भुलाने के लिए आप यह कहानी सुन लीजिए!"

बेताल यों कहानी सुनाने लगा: प्राचीन काल में पुष्पक देश पर गरुड़ वर्द्धन नामक राजा राज्य करते थे। उनके पिता के जमाने से सैनिक विभाग और गुप्तचर विभाग के अधिपति बने प्रचण्डसेन और बलवंत वर्मा जब बूढ़े हो गये, तब उस राजा ने योग्य व्यक्तियों को उन पदों पर नियुक्त करना चाहा।

राजा के द्वारा दरियाफ़्त करने पर उन्हें पता चला कि उनके दरबार में रहने वाले वीरकेतु और अमरसेन नामक युवक बड़े ही समर्थ और विश्वास पात्र व्यक्ति हैं। राजा गरुड़ वर्द्धन ने इस बात का निर्णय करने के लिए अपने मंत्री मुकुंद वर्मा की सलाह माँगी कि उन युवकों में से कौन किस पद के योग्य हैं?

इस पर मंत्री ने राजा को यह सलाह दी—"महाराज, वीरकेतु और अमरसेन को हम छे-छे महीने तक दोनों पदों पर नियुक्त करके उन की शक्ति और सामर्थ्य की जाँच करेंगे। वीरकेतु जब सेनापति का पद संभालेगा, तब अमरसेन गुप्तचर विभाग की देखभाल करेगा। छे महीने के बीत जाने पर हम लोग अमरसेन को सेनापति तथा वीरकेतु को गुप्तचर विभाग के अधिकारी के रूप में बदल डालेंगे। अपने कार्यकाल में वे जिस पद पर जैसी सामर्थ्य का परिचय देंगे, उसके आधार
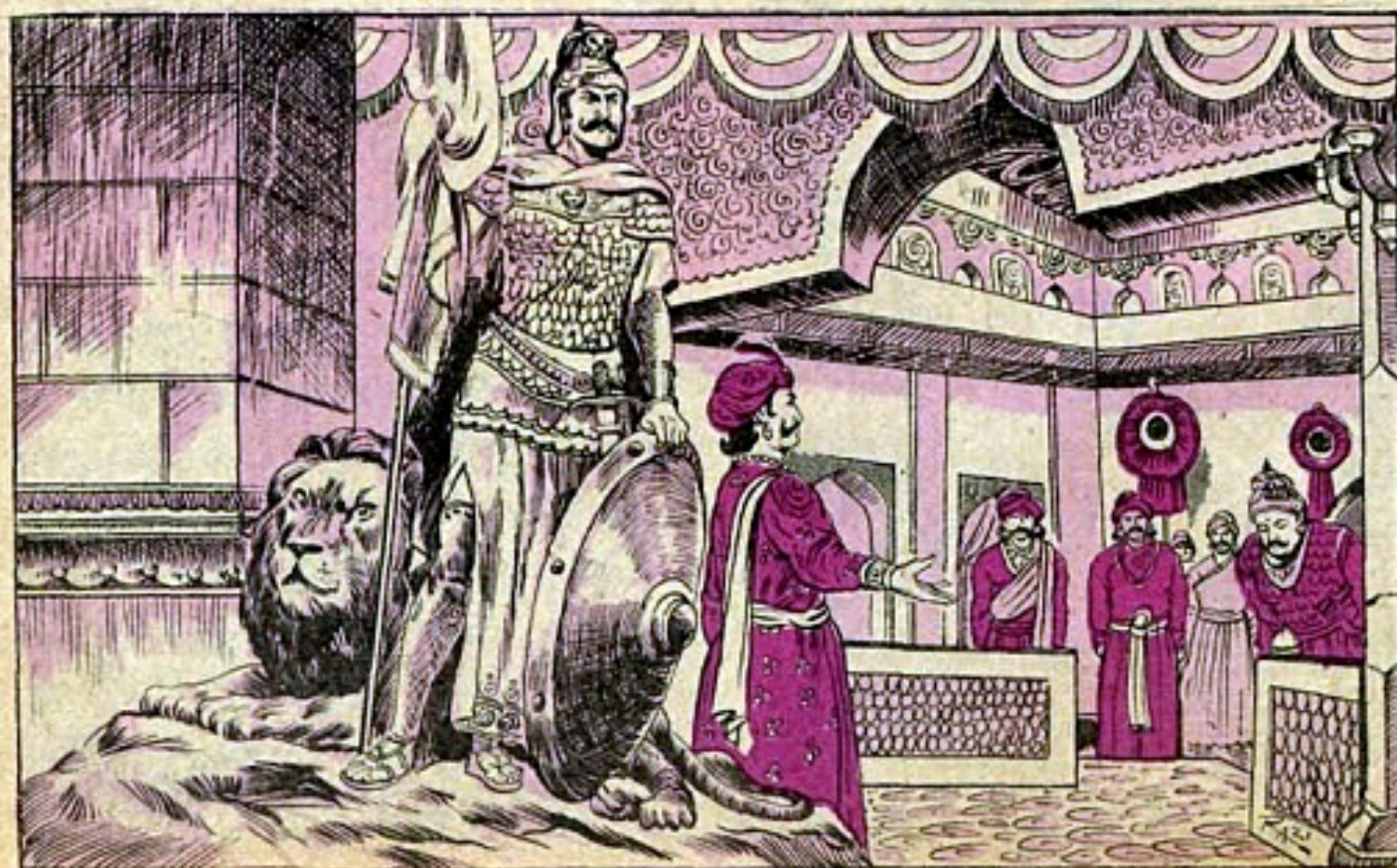
पर हम उन्हें उन पदों पर स्थाई रूप से नियुक्त करेंगे ।"

राजा गरुडवर्द्धन को मंत्री की सलाह पसंद आई, उन्होंने वीरकेतु को बुलवा कर छे महीने तक सेनापति का पद संभालने का आदेश दिया । इसी प्रकार अमरसेन को छे महीने तक गुप्तचर विभाग सौंप दिया ।

वीरकेतु सेनापति का पद ग्रहण करते ही घुड़सवार सेना और गजसेना की वृद्धि करने में लग गया । साथ ही युद्ध के समय सैनिकों के द्वारा जो पुराने व्यूह रचे जाते थे उनकी जगह विदेशियों के द्वारा अमल करने वाली आधुनिक युद्ध शैलियों का प्रवेश कराया । गांधार तथा कामरूप देशों से उत्तम नस्ल के घोड़े व हाथी मँगवाये । नये क़िस्म के हथियार भी विदेशी व्यापारियों के द्वारा ख़रीदा ।

छे महीने के बीत जाने पर वीरसेन का सेनापति वाला समय समाप्त हो गया । राजा ने उसको गुप्तचर विभाग का अधिपति नियुक्त किया और उस पद को संभालने वाले अमरसेन को सेनापति का पद सौंप दिया ।

अमरसेन ने सेनापति के पद को ग्रहण करते ही विदेशों से उत्तम नस्ल के घोड़ों तथा हाथियों को मँगवाना बंद किया । हथियारों तथा सैनिक शिक्षण के मामलों में भी उसने फिर से पुरानी पद्धतियों को अमल करना शुरू किया । उसका यह दृढ़ विश्वास था कि किसी तरह के मामलों

लड़ाई हुई। इस लड़ाई में दोनों राज्यों के कई सैनिक मर गये, फिर भी अमरसेन के पराक्रम और युद्ध कुशलता के कारण इस बार भी पुष्पक देश विजयी हुआ।

इसके बाद मंत्री मुकुंद वर्मा एक दिन राजा के दर्शन करके बोले–"महाराज, हमने वीरकेतु और अमरसेन के लिए जो छे महीने की अवधि निर्धारित की थी, इस शर्त को भूलकर आप वीरकेतु को सेनापति के पद पर नियुक्त कीजिए, क्यों कि वही इस पद के योग्य है?"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ! अब तक हम पर दो शत्रु देशों के हमले हो गये। इस बार गौड़ देश का राजा हम पर हमला करके अमरसेन के हाथों में अपनी जान खो बैठ सकता है! ऐसा हो जाना हमारे लिए किसी भी दृष्टि से हितकर नहीं है।" यों कहते राजा मुस्कुरा उठे।

इसके बाद राजा ने एक हफ़्ते के अन्दर एक शुभ मुहूर्त में वीरकेतु को सेनापति के पद पर तथा अमरसेन को गुप्तचर विभाग का अध्यक्ष नियुक्त किया और उन्हें अमूल्य उपहार देकर उनका सम्मान किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, अमरसेन ने पुष्पक देश पर हमला करनेवाले दो देशों को हराकर सेनापति के रूप में अपनी युद्ध कुशलता साबित की है,

में भी विदेशियों का अनुकरण करना अपने देश का अपमान करना है। यह कार्य किसी देश भक्त के लिए शोभा नहीं देता।

अमरसेन के द्वारा सेनापति का पद संभालने के तीन महीनों के अंदर ही पड़ोसी देश जयपुर राज्य पुष्पक देश पर हमला कर बैठा। अमरसेन ने बड़ी कुशलता पूर्वक अपनी सेना का संचालन करके वीरता पूर्वक युद्ध किया और जयपुर की सेनाओं को मार भगाया।

इसके बाद जब उसका सेनापति का काल एक म्हीने में समाप्त होनेवाला था, तब पुष्पक देश पर दक्षिणी सीमा पर स्थित विदर्भ देश चढ़ाई कर बैठा। घनघोर

ऐसी हालत में राजा गरुड़वर्द्धन के द्वारा उसे सेतापति के पद से हटाकर उसकी जगह वीरकेतु को नियुक्त करना क्या विवेकपूर्ण निर्णय है? या ईर्ष्या ही इसका कारण है? इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फटकर टुकड़े-हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया—"तुमने राजा की विवेकशीलता पर संदेह प्रकट किया, पर मैं कहता हूँ कि राजा ने बड़ा ही विवेकपूर्ण निर्णय किया है। वे बड़े ही उच्च राजनीतिज्ञ हैं। एक सेनापति के लिए देशभक्ति और मातृदेश के प्रति आदर का भाव होना चाहिए! उसे हमेशा पड़ोसी देशों के सैनिक तथा अस्त्र-शस्त्रों पर निगरानी रखे रहना चाहिए! उन देशों से बढ़कर अपने देश के सैनिकों को सैनिक प्रशिक्षण देना चाहिए! साथ ही अस्त्रों के मामलों में भी सावधान रहना चाहिए! ऐसे मामलों में वीरकेतु जागरुक रहा। यही कारण है कि उनके सेनापतित्व काल में पड़ोसी देश हमला करने का साहस न कर पाये! मगर अमरसेन के समय में इसके विपरीत कार्यक्रम अमल में लाये गये। इसीलिए पुष्पक देश की ताक़त को कमजोर मानकर पड़ोसी देशों ने हमला किया। युद्ध में भारी नुक़सान उठाकर विजय पाने की अपेक्षा दुश्मन को हमारे देश पर हमला करने से डरने लायक़ स्थिति पैदा करने वाला सेनापति ही समर्थ कहलाता है। यह काम वीरकेतु कर सका। पर इस काम में अमरसेन असफल रहा। पर अमरसेन की देशभक्ति पर मुग्ध हो राजा ने उसे गुप्तचर विभाग का अधिपति नियुक्त किया। ऐसे पद के लिए देशभक्ति से बढ़कर बड़ी योग्यता दूसरी नहीं हो सकती। इसलिए मेरे ख़्याल से राजा का निर्णय सही मालूम होता है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

# विदूषक के सवाल

उज्जैन नगर के राजा माधव वर्मा के दरबार में कई मशहूर पंडित थे। एक दिन राजा का दरबार लगा हुआ था। उस वक़्त एक मध्य वयस्क व्यक्ति कांसे की डंका बजाते दरबार में पहुँचा।

राजा का निमंत्रण पाये बिना दरबार में प्रवेश करने वाले व्यक्ति की ओर देख माधव वर्मा विस्मय में आ गये, तभी आगंतुक बोला—"महाराज, मेरा नाम सोमशेखर है। मैं कलिंग देश का निवासी हूँ। दस वर्षों से मैं देश के सभी राजाओं के दरबारों में जाकर वहाँ के पंडितों को सभी शास्त्रों में हराते आया हूँ! मैंने सुना है कि आपके दरबार में भी कई पंडित हैं। इसलिए उन्हें हराने आया हूँ।"

राजा माधव वर्मा ने अपने दरबार के पंडितों की ओर एक बार नज़र दौड़ाकर देखा, तब सोमशेखर से पूछा—"आप हमारे पँडितों को तर्क में हराना चाहते हैं! पर हमें यह बताइये कि आपके इस तर्क के नियम क्या हैं?"

"आपके दरबार के पँडित या पामर चाहे कोई भी क्यों न हो, किसी भी प्रकार के प्रश्न मुझ से पूछ सकते हैं! अगर मैं उन सवालों का सही जवाब न दे सका तो मैं अपनी कांसे की यह डंका फोड़कर ज़िंदगी भर मैं उसका सेवक बना रहूँगा! यदि आप के दरबारी हार जाये तो उन्हें मेरे चरणों में प्रणाम करके मुझे महा पंडित के रूप में स्वीकार करना पड़ेगा!" सोमशेखर ने जवाब दिया।

सोमशेखर की शर्त को दरबारी पँडितों ने मान लिया; इसके बाद दरबारी पंडितों ने सोमशेखर से कई सवाल पूछे। उन सभी सवालों का सही जवाब देकर सोमशेखर ने दरबारी पँडितों को हराया।

शंकर नारायण

अपने पंडितों की पराजय पर राजा दुखी हुए। क्योंकि वे अपने दरबारी पंडितों को महान पंडित मानते थे।

सोमशेखर ने अपनी विजय की सूचना के रूप में कांसे की डंका बजाई और कहा— "महाराज, मैंने पहले ही अपनी शर्तें बताई थीं। आपके सभी दरबारी पंडित मेरे हाथों में बुरी तरह से हार गये हैं। मुझे एक और राजा के दरबार में जाकर वहां के पंडितों को भी हराना है! इसलिए शर्त के मुताबिक़ अब आपके पंडितों को मेरे चरण छूने होंगे।"

दरबारी पंडितों ने अपमानित हो अपने सर झुका लिये और सोमशेखर के चरणों में प्रणाम करने के लिए अपने अपने आसनों पर से उठने को हुए, इस बीच दरबारी विदूषक आगे आया और उसने सोमशेखर से पूछा—"महा पंडित, मैं कोई पंडित नहीं हूँ! क्या आप मेरे सवालों का जवाब दे सकते हैं?"

इस पर सोमशेखर मुस्कुरा उठा और बोला—"तुम्हारी वेष-भूषा ही बताती है कि तुम पंडित नहीं हो! मैंने पहले ही महाराजा से निवेदन किया है कि दरबार का कोई भी व्यक्ति मुझ से सवाल पूछ सकता है! उनका जवाब न देने पर मैं जिन्दगी भर उनकी सेवा करूँगा।"

"तब तो कृपया आप मेरा सवाल सुनिये! दो मूर्ख साथ-साथ चलते एक गंदे नाले में गिर गये। इस पर एक आदमी के कपड़ों पर कीचड़ लग गया और दूसरे आदमी के कपड़ों पर न लगा। उन दोनों में से कौन नहायेगा?" विदूषक ने पूछा।

"जिसके कपड़ों पर कीचड़ लगा है, वही नहायेगा।" सोमशेखर ने झट जवाब दिया।

"नहीं, मैंने पहले ही बताया है कि वे दोनों मूर्ख हैं! जिसके कपड़ों पर कीचड़ लगा है, वह दूसरे को देख यही सोचेगा कि उसके कपड़ों पर भी कीचड़ नहीं लगा है। जिसके कपड़ों पर कीचड़ नहीं लगा है, वह

दूसरे के कपड़ों पर भी कीचड़ लगा देख यही सोचेगा कि उसके कपड़ों पर भी कीचड़ लगा है, वह नहायेगा!" विदूषक ने जवाब दिया।

यह जवाब तर्क संगत देख सोमशेखर का चेहरा पीला पड़ गया।

इस पर उत्साह में आकर विदूषक ने कहा–"मेरा एक और सवाल सुनिये! दो बुद्धिमान लोग एक ही रास्ते पर चलते बगल के गंदे नाले में गिर पड़े। एक के बदन पर कीचड़ लग गया और दूसरे के बदन पर नहीं, उनमें से कौन अपने बदन के कीचड़ को धोने के लिए नहायेगा?"

सोमशेखर ने विदूषक के पहले सवाल को याद करके जवाब दिया–"जिसके बदन पर कीचड़ नहीं लगा है, वही नहा लेगा!"

विदूषक ठहाके मारकर हंस पड़ा और बोला–"मैंने पहले ही बताया है कि वे दोनों मूर्ख नहीं, बुद्धिमान हैं! इसलिए जिसके बदन पर कीचड़ लगा है, वही जाकर नहायेगा!"

दरबारियों ने खुशी में आकर तालियां बजाईं। सोमशेखर ने समझ लिया कि वह इस बार भी हार गया है। इसलिए वह घबरा कर इधर-उधर ताकने लगा।

इस पर विदूषक सोमशेखर के समीप पहुंच कर बोला–"अब आप बताइये कि एक ही रास्ते पर चलने वाले दो व्यक्ति अगर गंदे नाले में गिर जाते हैं तो उनमें से एक के कपड़ों पर कीचड़ का लगना और दूसरे के कपड़ों पर कीचड़ का न लगना कैसे मुमकिन होगा? आप अपने को एक महा पंडित घोषित कर कांसे की डंका बजाते हैं, क्या आप इस साधारण सवाल का जवाब भी सही ढंग से दे नहीं पाते? कोई पामर व्यक्ति भी इस सवाल का सही जवाब दे सकता है!"

यह जवाब पाकर सोमशेखर ने बड़ी विनय के साथ अपनी कांसे की डंका विदूषक के चरणों के सामने रख दी।

राजा ने सोचा कि पंडित का इससे अधिक अपमान करना उचित न होगा। उन्हों ने सभा समाप्त करने की आज्ञा दी।

# अंधा इन्साफ़

बगदाद नगर में तीन भिखारी एक साथ रहा करते थे। वे दिन भर नगर की गलियों में जाकर भीख माँगते, इससे जो कमाई होती, खाने का खर्च चलाकर जो कुछ बचता उसे अपने निवास में एक जगह छिपा रखते थे। इस प्रकार उन लोगों ने बारह सौ चान्दी के दीनार इकट्ठा किये।

एक दिन उनमें से एक भिखारी नगर की किसी गली में पहुँचा, एक मकान के सामने जाकर दर्वाजे पर दस्तक दी।

भीतर से मकान मालिक ने पूछा– "कौन है?" अंधे भिखारी ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया, पुनः दर्वाजे पर दस्तक दी। उसका विचार था कि वह अपने को भिखारी बतायेगा, तो मकान मालिक दर्वाजा न खोलेगा और उसे दुतकार कर भगा देगा। यह बात अंधा भिखारी अच्छी तरह से जानता था।

मकान मालिक ने दूसरी बार फिर यही सवाल किया–"दर्वाजे पर दस्तक देने वाला कौन है?" इस बार भी जब जवाब न मिला, तब मकान मालिक ने दर्वाजा खोलकर अंधे को देखा और पूछा– "तुम कौन हो?"

"बाबूजी, मैं एक अंधा भिखारी हूँ। मुझ पर मेहर्बानी कीजिए।"

मकान मालिक ने अंधे भिखारी को हाथ का सहारा दिया और कहा–"मेरे साथ मकान के भीतर चलो!"

भिखारी ने सोचा कि उसे कुछ न कुछ मिल जाएगा। इस आशा से वह मकान के मालिक के पीछे तीसरी मंजिल तक चढ़ कर ऊपर चला गया।

"सुनो, अब तुम सच सच बताओ, वाकई तुम क्या चाहते हो?" मकान मालिक ने पूछा।

"मैं भूख से तड़प रहा हूँ। या तो मुझे खाना खिलाइये या पैसे दीजिए।" भिखारी ने उत्तर दिया।

"ओह, यह बात है! यहाँ पर कुछ नहीं मिलेगा। किसी दूसरे मकान में जाकर याचना कर लो।" मालिक बोला।

"बाबूजी, यह बात बताने के लिए मुझे इतनी सीढ़ियाँ चढ़वाने की क्या जरूरत थी? यह उत्तर नीचे ही देते तो मुझे यह तक़लीफ़ न होती!" भिखारी ने कहा।

इस पर गुस्से में आकर मकान मलिक ने कहा–"जब मैंने पूछा कि तुम कौन हो? इसका तुमने जवाब क्यों नहीं दिया?"

"आखिर आप कहना क्या चाहते हैं?" भिखारी ने पूछा।

"तुम्हें दान करने के लिए मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं है, तुम चुपचाप यहाँ से चले जाओ।" मकान मालिक बोला।

"तब तो मुझे फिर से नीचे पहुँचा दीजिए!" भिखारी ने कहा।

"क्या मेरे लिए कोई दूसरा काम नहीं है? चले जाओ।" मकान मालिक बोला।

भिखारी गहरी साँस लेकर टटोलते हुए सीढ़ियों तक पहुँचा। सीढ़ियाँ उतरते वक़्त उसका पैर फिसल गया और नीचे गिर पड़ा। वह चोट खाकर कराहते हुए जैसे-तैसे गली में जा पहुँचा।

ठीक उसी वक़्त बाक़ी दोनों अंधे भिखारी उसी गली में आ पहुँचे। तीसरे भिखारी की कराहट सुनकर वे दोनों उसे

पहचान गये और उसके निकट पहुँच कर पूछा–"दोस्त, बताओ, क्या हुआ ?"

घायल भिखारी ने अपने दोस्तों को सारी कहानी सुनाई और कहा–"सुनो, आज मैं ज्यादा दूर चल नहीं सकता, तुम लोगों के पास एक दीनार हो तो दे दो, कोई चीज खरीद कर अपना पेट भर लूँगा ।"

"आज हमारे भी हाथ कुछ न लगा। आज बड़ा ही दुर्दिन है? चलो, घर चले चलेंगे ।" दोनों अंधे भिखारियों ने कहा।

उन भिखारियों की बातचीत मकान मालिक ने सुन ली । वह एक डाकू था । वह अपने घर आये हुए अंधे भिखारियों के पीछे उनके घर पहुँचा । भिखारियों ने अपने घर पहुँच कर ताला खोला, अन्दर जाकर किवाड़ बंद किये, लेकिन इस बीच डाकू भी उनके घर के अन्दर घुस पड़ा ।

अंधे भिखारियों ने अपना संदूक खोल कर सारे दीनारों की गिनती की, कुल बारह सौ चाँदी के दीनार थे । उनमें से एक दीनार निकाल कर एक अंधा भिखारी रोटी-सब्जी खरीद लाया । इसके बाद तीनों बैठकर खाना खाने लगे। उनकी बगल में पहुँचकर डाकू भी खाना खाने लगा ।

"चार लोगों के चबाने की आहट सुनाई दे रही है, वह चौथा आदमी कौन है? वह डाकू होगा!" एक अंधे ने कहा । दूसरे ही पल में वे तीनों भिखारी चिल्लाने लगे–"चोर-चोर! डाकू है!"

अंधे भिखारियों की चिल्लाहट सुन कर कई लोग वहाँ पर जमा हो गये। डाकू आँखें बंदकर इस तरह बैठ गया, मानों वह अंधों में से एक है, तब बोला—"महाशयो, हम लोगों को कोतवाल साहब के पास ले जाइये। उनसे मैं एक रहस्य बताना चाहता हूँ।"

फिर क्या था, वहाँ पर इकट्ठी हुई भीड़ उन चारों अंधों को कोतवाल के पास ले गई। कोतवाल ने पूछा—"ये लोग कौन हैं? यहाँ किसलिए आये हैं?"

"हुज़ूर, हम तीनों अंधे भिखारी हैं! कोई डाकू हमारे मकान में घुसकर मेहनत के साथ कमाये हुये हमारे धन को हड़पने की कोशिश कर रहा है!" अंधे भिखारियों में से एक ने कहा।

"सच बताओ, वह डाकू कहाँ पर है?" कोतवाल ने पूछा। "हुज़ूर, कोड़े की मार खाये बिना हम थोड़े ही सच बतायेंगे?" आँखें बंद किये हुए डाकू ने कहा।

"तब तो सच बताने तक इस पर कोड़े चलाओ।" कोतवाल ने सिपाहियों को आदेश दिया। कोड़े की दो ही मार पड़ी थी कि डाकू ने आँखें खोल कर विनती की—"सरकार, माफ़ कीजिएगा। मैं सच बता देता हूँ। मुझे छोड़ दीजिए। हम चारों ने अंधों जैसे अभिनय करके नगर में भीख माँग कर बारह सौ चाँदी के दीनार कमाये। मैंने सच बताया है, इसलिए मेरे हिस्से के दीनार मुझे दिलवा दीजिए! बाक़ी लोगों पर भी कोड़ों की मार पड़ेगी तो वे भी सच्ची बात बतायेंगे।"

कोतवाल ने डाकू की बातों को सच माना और उसे तीन सौ दीनार देकर भेज दिया। इसके बाद उसने बचे हुए तीनों अंधे भिखारियों को खूब पिटवाया, फिर भी उन लोगों ने अपनी आँखें नहीं खोलीं। आखिर वे लोग मार खाकर बेहोश हो गये। तब कोतवाल ने अंधों के द्वारा कई सालों से जमा किये दीनार खुद ले लिया और अंधों को खाली हाथ भेज दिया।

# अमृत की खोज में

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी राज्य पर शासन कर रहे थे, उस समय उनके सामंत राजा चिरायु के यहाँ नागार्जुन नाम से बोधिसत्व मुख्य मंत्री का भार संभालते थे ।

नागार्जुन दयालू और दानी के रूप में लोकप्रिय थे । साथ ही रसायन शास्त्र और औषध विज्ञान के पारंगत विद्वान थे । उन्होंने एक रसायन-प्रयोग के द्वारा एक रहस्य योग का आविष्कार किया और उसके जरिये राजा तथा अपने को भी बुढ़ापे और मरण से दूर रखा ।

एक बार अचानक नागार्जुन का सब से प्यारा पुत्र सोमदेव स्वर्गवासी हुआ, इस पर नागार्जुन को अपार दुख हुआ । नागार्जुन सहज ही दयालु थे । इसलिए वे सोचने लगे—"आइंदा इस संसार में किसी की मृत्यु ही न हो! कोई भी मानव दुख का शिकार न बने, इस वास्ते कोई न कोई उपाय करना होगा ।"

आखिर नागार्जुन ने यह निश्चय किया—"रसायनों का प्रयोग अधिक खर्चीला है । इसलिए सर्व साधारण जनता के लिए भी खरीदने लायक जड़ी-बूटियों द्वारा अमृत तैयार करना होगा । तभी सभी लोग दुख-दर्द से दूर होकर सुखी रह सकते हैं ।"

अपने इस निर्णय के अनुसार कई तरह की औषधियों के संयोग से नागार्जुन अमृत तैयार करने में लग गये । अपने सारे शास्त्र विज्ञान का उपयोग करके उन्होंने अनेक अनुसंधान किये । बहुत हद तक सारी प्रक्रियाएँ पूरी हो गईं । उनका अनुसंधान अब अंतिम चरण में पहुँचा । अब केवल अमृत-कल्प नामक जड़ी-बूटी को मिलाने से उनका प्रयोग संपूर्ण हो जाएगा ।

जातक कथा

इस बीच यह समाचार इंद्र के कानों तक पहुंचा। उसी वक़्त देवराज इन्द्र ने अश्विनी देवताओं को बुलाकर आदेश दिया–"तुम लोग तुरंत पृथ्वी लोक में चले जाओ और नागार्जुन के 'अमृत योग' के पूर्ण होने से रोक दो। तुम लोग बिना संकोच के उन पर साम, दाम, भेद और दण्डोपायों का प्रयोग करो। बाकी काम में देख लूंगा।"

अश्विनी देवता वेष बदल कर भूलोक में पहुंचे। नागार्जुन से मिल कर कुशल प्रश्न पूछे। तदनंतर बोले–"मंत्रीवर, राज्यों के उलट-फेर करने की युक्तियाँ जानने वाले आप महानुभाव से कोई बात छिपी नहीं है। लेकिन इस वक़्त आप ब्रह्मा के संकल्प को रोकने का साहस कर रहे हैं! मानव जाति की 'धर्म गति' बनी मृत्यु को आप 'अमृत सिद्धि' के द्वारा अवरुद्ध कर दे तो सृष्टि का शासन ही डगमगा जाएगा न? अगर एक भी मानव नहीं मरता है तो, उनके वास्ते कितने लोक चाहिए? अलावा इसके जो कार्य देवताओं के द्वारा संपन्न होना है, उसे मानव मात्र बने आप संपन्न करने का प्रयत्न करें तो क्या देवता और मानवों के बीच कोई अंतर रह जाएगा? आप का पुत्र भूलोक को भले ही त्याग चुका हो, पर वह स्वर्ग में सुखी है!"

इन बातों से नागार्जुन का मन संतुष्ट नहीं हुआ। वे इस विचार में डूब गये
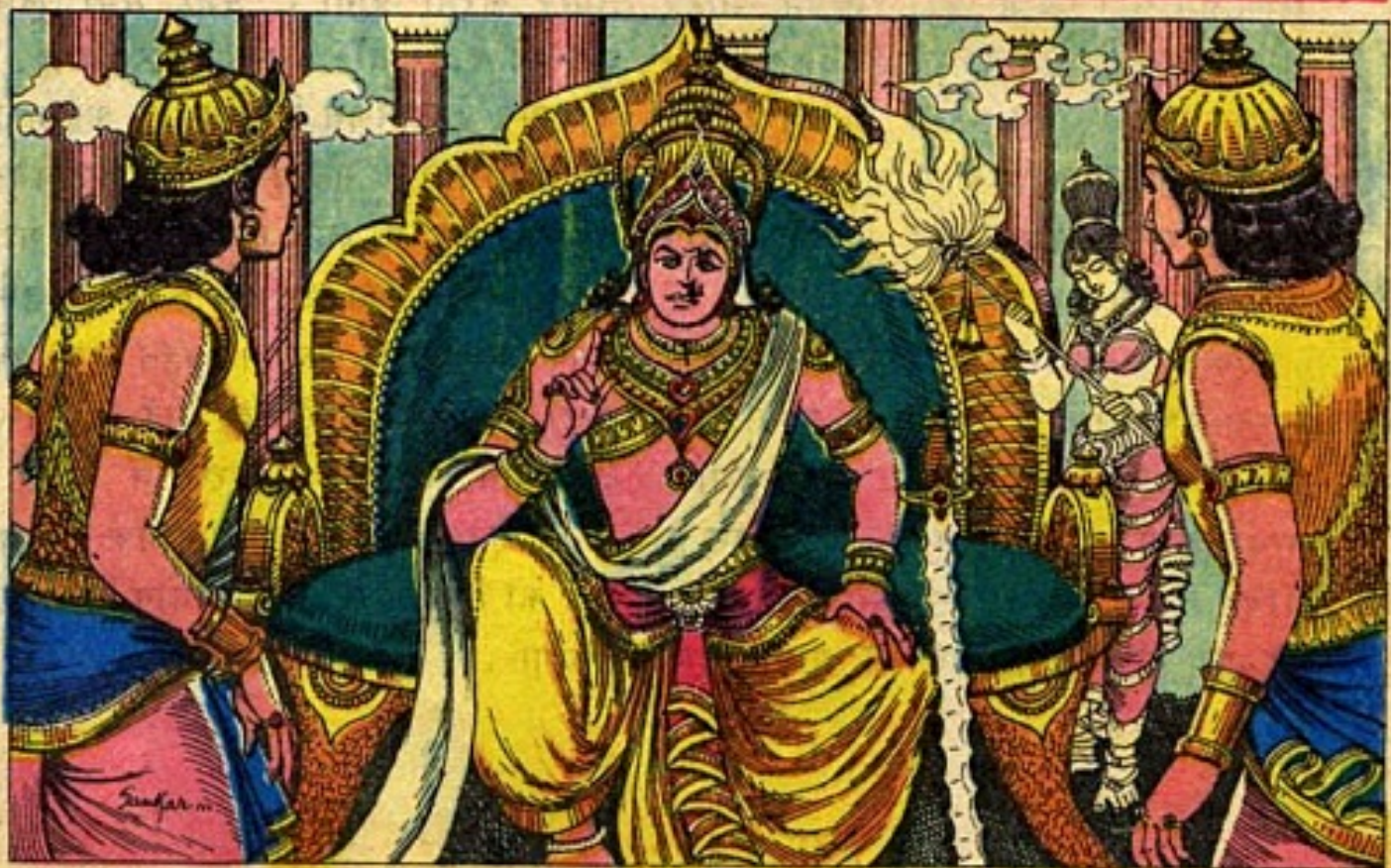
कि वह जो कार्य कर रहे हैं, वह उचित है या नहीं ?

इसी बीच राजा चिरायु के पुत्र जयसेन का युवराजा के रूप में अभिषेक करने की तैयारियाँ हो गईं। एक शुभ मुहूर्त में सारा दरबार सभासदों से खचाखच भर गया।

इस बीच वृद्ध ब्राह्मण के रूप में पृथ्वी पर पहुँच कर इन्द्र जयसेन के पास गये और गुप्त रूप से यों बोले–"बेटा, क्या तुम यह बात नहीं जानते कि तुम्हारे पिता बुढ़ापे और मरण से परे हैं? इसलिए तुम्हें सदा के लिए युवराजा बनकर ही रहना पड़ेगा, लेकिन तुम्हें कभी राज्य प्राप्त न होगा!"

यह समाचार सुन कर जयसेन चिंता में डूब गया। इस पर वृद्ध ब्राह्मण ने समझाया–"बेटा, इस बात को लेकर तुम चिंता न करो। तुम्हारी मनोकामना की पूर्ति के लिए एक सरल उपाय है। नागार्जुन का यह नियम है कि भोजन के पूर्व उससे जो कोई कुछ माँगे, उसे देने की उसकी परिपाटी है। कल तुम वक़्त पर पहुँच कर बिना झिझक के यह पूछो कि मुझे आपका सर चाहिए। फिर देखा जाएगा कि क्या होता है?"

राज्य के लोभ में फंसे जयसेन ने भोजन के समय से पहले ही नागार्जुन के पास पहुँच कर वृद्ध के कहे अनुसार उनका सर माँगा। इस पर नागार्जुन ने थोड़ा भी संकोच किये बिना अपनी तलवार जयसेन के

हाथ देकर कहा–"बेटा, डरो मत। मेरा सर काट कर ले लो।" पर रसायन के प्रभाव से नागार्जुन का सर वज्र तुल्य हो गया था, इस कारण जयसेन के द्वारा कई बार काटने पर भी तलवार टकरा कर वापस आती, मगर नागार्जुन का सर नहीं कटा।

यह समाचार पाकर राजा वहाँ पर दौड़े आये, अपने पुत्र के इस कार्य पर दुखी हो उसे रोकना चाहा। तब नागार्जुन बोले–"महाराज, युवराजा ने जो कामना व्यक्त की, उसके आगे-पीछे की बातें मैं अच्छी तरह से जानता हूँ! जयसेन सिर्फ़ निमित्त मात्र हैं। इसलिए मैंने उसको रोकना नहीं चाहा। पिछले जन्म में मैंने निन्यानवें दफ़े इनकार किये बिना अपना सर काट कर दिया है। यह सौवीं दफ़ा है। इस बार पीछे हटने के अपयश से मुझे बचाने की जिम्मेवारी आपकी है!" इन शब्दों के साथ भक्ति पूर्वक आख़िरी बार नागार्जुन ने राजा के साथ आलिंगन किया।

इसके बाद अपनी जड़ी-बूटियों वाली थैली में से एक जड़ी-बूटी निकाली, उसका रस निचोड़ दिया और उसे तलवार पर मलकर जयसेन से बोले–"बेटा, अब मेरा सर काट डालो!"

जयसेन ने ज्यों ही तलवार चलाई, त्यों ही गाजर-मूली की तरह नागार्जुन का सर कट कर नीचे गिर पड़ा।

उस दृश्य को देख सहन न कर सकने की हालत में राजा भी अपने प्राण त्याग करने को तैयार हो गये।

इस पर नीचे गिरे नागार्जुन के सर से ये बातें सुनाई दीं–"राजन, आप कृपया चिंता न करें! मैं अपने सभी जन्मों में आपके साथ रहूँगा।"

इसके बाद राजा पूर्ण रूप से विरागी बन गये। तत्काल ही वे अपने पुत्र का राज्याभिषेक करके तपस्या करने जंगलों में चले गये।

इस प्रकार जयसेन को राज्य प्राप्त हुआ और इन्द्र का व्यूह भी सफल हुआ।

# महम्मद-बिन-तुगलक

दिल्ली का शासन ई. सन् १३२० में तुगलक वंश के संस्थापक गयाजुद्दीन के हाथ में आ गया। राज्याभिषेक के समय तक वह वृद्ध हो चुका था। वह बंगाल से जब लौट रहा था, तब उसका स्वागत करने के लिए दिल्ली के समीप में विशेष रूप से एक द्वार-तोरण बनवाया गया।

गयाजुद्दीन के दिल्ली के समीप पहुंचने की ख़बर सुनते ही निजामुद्दीन नामक एक मशहूर मुसलमान साधू ने कहा था—"सुलतान को दिल्ली अभी बहुत दूर है!" इसके बाद यह बात पूर्णतया सत्य साबित हुई।

गयाजुद्दीन ज्यों ही द्वार-तोरण के निकट पहुँचा, त्यों ही वह टूटकर उसके ऊपर गिरा। इस कारण वह वहीं पर ठण्डा हो गया। वैसे यही मालूम होता है कि सुलतान की मौत दुर्घटना से हो गई है। मगर कई लोगों का विचार है कि सुलतान के बेटे उलूग खाँ का यह षड़यंत्र था।

उलूग खाँ महम्मद-बिन-तुगलक के नाम से दिल्ली का सुलतान बना। चंचल प्रकृति वाले तुगलक ने अपनी राजधानी को दिल्ली से देवगिरि के लिए बदलना चाहा। उसका नाम बदलकर दौलताबाद रखा। देवगिरि दिल्ली से सात सौ मील की दूरी पर है। वहाँ पर एक क़िला और कई भवन बनाये गये।

सुलतान ने यह फ़ैसला किया कि सरकारी दफ़्तरों के साथ दिल्ली के सारे नागरिकों को भी दौलताबाद में ले जाना चाहिए! सुलतान का निर्णय सुनने पर दिल्ली की जनता ने पीढ़ियों से निवास बनी दिल्ली को तथा अपनी जमीन-जायदाद को छोड़ नये स्थान पर जाने से इनकार किया।

जिन लोगों ने इनकार किया, उन सब को डरा-धमका कर देवगिरि तक पैदल चलवाया। आख़िर अंधे व लूले-लंगड़े लोगों को भी सिपाही ज़बर्दस्ती खींच ले गये। इस वजह से रास्ते में ही कई लोगों की मौत हो गई। इसलिए प्राचीन नगरी दिल्ली एक दम वीरान बन गई।

दौलताबाद में जनता सुखी न बन पाई, सभी अधिकारियों को दिल्ली नगर ही अच्छा मालूम हुआ। आख़िर सुलतान को भी नई राजधानी पसंद न आई। एक दिन अचानक सुलतान ने घोषणा कर दी कि सारी जनता को फिर से दिल्ली वापस जाना चाहिए। वैसे सब लोग दिल्ली वापस जाना चाहते थे, लेकिन सुलतान के चंचल स्वभाव पर सबको बड़ा क्रोध आया।

वापसी यात्रा एक योजनापूर्वक न चली। दूर तक न चल सकने के कारण मार्ग मध्य में ही कई लोग मर गये। कुछ लोगों को लुटेरों ने लूट लिया। बचे हुए लोग दिल्ली पहुँचे। पर वहाँ के सारे घर उजड़ गये थे। सरकारी खज़ाना एकदम खाली हो गया था, इसलिए सुलतान ने जनता की संपत्ति पर क़ब्ज़ा कर लिया।

सरकारी खजाना खाली हो गया था, इसलिए सुलतान ने सोने-चाँदी के सिक्कों की जगह तांबे के सिक्के चलाये। इस पर जनता ने अपने तांबे के बर्तनों और गहनों को गलाकर निजी सिक्के गढ़वाये। इस तरह से राज्य का दीवाला निकल गया। इस पर सुलतान ने अतिरिक्त कर लगवाये। जो लोग कर चुका न पाये, उन्हें तरह-तरह की यातनाएं दी गईं।

सुलतान ने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए तीन लाख सत्तर हजार सैनिकों का संगठन किया। सबसे पहले सुलतान ने फारस पर हमला करना चाहा। मगर बाद को उसने अपना यह विचार बदलकर कुमान प्रदेश के छोटे-छोटे राज्यों को अपने राज्यों में मिलाने के ख़्याल से पहाड़ों की ओर फौज को बढ़ाया।

पर इस काम में भी वह पूरी तौर से सफल न हो पाया। मानसून शुरू हुआ। तूफान की वजह से पहाड़ी चट्टानें कटकर फौज पर गिरने लगी। पहाड़ी प्रदेशों पर शासन करने वाले छोटे-छोटे राजाओं ने भी इस हमले का सामना करके दुश्मन की फौज को खूब सताया। इस हमले में कई सिपाही अपनी जान से हाथ धो बैठे।

सुलतान के राज्य में विद्रोह प्रारंभ हो गये। सिंधु प्रांत में विद्रोह को दबाने के लिए महम्मद-बिन-तुगलक खुद निकल पड़े, मगर जहरीले बुखार के शिकार होकर १३५१ में मर गये। छोटे-छोटे सामंत राजाओं ने भी अपनी आजादी घोषित की, जिसके कारण तुगलक का साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया।

# कूटनीति

सिंहपुरी और वज्रगिरि अड़ोस-पड़ोस के राज्य थे। सिंहपुरी के सामने वज्रगिरि राज्य कमजोर था। राज्य का लोभ रखने वाले वज्रगिरि के राजा कालकेतु ने सिंहगिरि के राजा वीरसिंह पर कई बार हमला किया, और हार गया। इस पर कालकेतु ने सोचा कि कोई षड्यंत्र करके वीरसिंह को बन्दी बनाना चाहिए! इस विचार से उसने वीरसिंह के पास एक दूत के द्वारा यह संदेशा भेजा कि मैं चाहता हूँ कि हमारे दोनों राज्यों के बीच शाश्वत रूप से कोई समझौता होना चाहिए, इसलिए कृपया इस संबंध में चर्चा करने के लिए आप हमारी राजधानी में पधारने का कष्ट करें। इस निमंत्रण को वीरसिंह ने मान लिया।

चार दिन बाद थोड़े अंग रक्षकों के साथ अपने नगर में आये हुए सिंहपुरी के राजा के सम्मान में कालकेतु ने एक दावत का इंतजाम किया और कहा—"आप यह बताइये कि एक राजा अपने शत्रुराजा को विश्वास दिलाकर दावत के लिए निमंत्रण देकर उसके हाजिर होने पर उससे यह कहे कि मैं तुमको बन्दी बना रहा हूँ, तब उसकी हालत कैसी होगी?"

"शत्रुराजा अगर बुद्धिमान और विवेकशील हो तो वह उस दावत में सम्मिलित नहीं होगा!" सिंहपुरी के राजा ने झट जवाब दिया। इस पर कालकेतु को शंका हुई और उसने गरजकर पूछा—"तो बताओ, तुम कौन हो?"

"मैं राजा वीरसिंह का प्रधान अंग रक्षक हूँ!" यों कहते उसने अपना छद्म वेष हटाया और बोला—"कालकेतु, हमारे राजा ने कई बार आपको युद्ध में हराया, और आपको प्राणों के साथ छोड़ दिया, इस वक्त हमारी सेनाएँ आपके राज्य की सीमा के अन्दर प्रवेश करके हमला करने को तैयार खड़ी हैं। आप इसका क्या जवाब देंगे?"

इस पर कालकेतु ने कांपते हुए उत्तर दिया—"मैं सिंहपुरी के राजा का सामंत हूँ। यह बात खुद उनसे निवेदन करने के लिए अभी मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ।"

# गलत फहमी

लक्षण देश में चूडामणि नामक एक नर्तकी रहा करती थी। उसने कई राजाओं के दरबार में अपनी नृत्य कला का प्रदर्शन करके खूब प्रशंसाएँ प्राप्त कीं और सम्मान भी पाये। एक बार उसने मालव राजा के दरबार में अपनी कला का प्रदर्शन किया। उसके नृत्य पर राज दरबारियों के साथ स्वयं राज भी मुग्ध हुए।

राजा जब चूडामणि को पुरस्कार देने को हुए, तब वह बोली—"महाराज, नृत्य शास्त्र का प्रामाणिक ग्रंथ रचने वाले ललिताचार्य इस वक़्त आप के दरबार में हैं! मैं आपके पुरस्कार के बदले उनके मुंह से मेरे नृत्य के बारे में चन्द बातें सुनना ज्यादा पसंद करूँगी।"

राजा चूडामणि की विनयशीलता पर प्रभावित हुए और उन्होंने ललिताचार्य से चूडामणि के नृत्य के बारे में चन्द बातें बताने का अनुरोध किया। ललिताचार्य अपने आसन से उठ खड़े हुए और बोले—"चूडामणि नृत्य विद्या में पूर्ण कौशल प्राप्त करना चाहती है। इसके वास्ते उसे नृत्य-कला संबंधी चन्द बारीक बातें सीखनी होंगी।" इन शब्दों के साथ आचार्य ने नृत्य शास्त्र संबंधी कुछ खास बातें बताईं। मगर उसके नृत्य के संबंध में आचार्य ने एक भी शब्द नहीं बताया।

दूसरे दिन चूडामणि का एक सेवक ललिताचार्य के घर पहुँचा और उसके द्वारा भेजी गई क़ीमती रेशमी वस्त्र में बन्दी एक वस्तु के साथ एक चिट्ठी भी आचार्य के हाथ में धर दी। ललिताचार्य ने चिट्ठी खोलकर पढ़ा। उसमें यों लिखा था—"मैं अनेक राजाओं के द्वारा सम्मान पाकर नृत्य विद्या की प्रवीणा कहलाई हूँ। ऐसी कुशल कलाकारिणी कहलाने वाली मैं नृत्य

नवल किशोर

शास्त्र के विशेषज्ञ बने आप को कोई न कोई उपहार दिये बिना इस देश को छोड़ कर जाना नहीं चाहती। आपके दिल में मेरी स्मृति को स्थाई बनाने के ख़्याल से मैं आपके पास यह उपहार भेज रही हूँ।"

ललिताचार्य ने चूडामणि से प्राप्त बण्डल को खोल कर देखा। उनके आश्चर्य की कोई सीमा न रही। उसके अन्दर कूडा-करखट भरा हुआ था। चूडामणि के इस अहंकार पर पल भर के लिए वे चकित रह गये, पर अपने को संभालकर उन्होंने चूडामणि के पास यों जवाब लिखकर भेजा– "तुम्हारा उपहार प्राप्त हुआ। बण्डल पर लपेटा गया रेशमी वस्त्र तुम्हारे सौंदर्य का जहाँ स्मरण दिलाता है, वहीं भीतर रखी हुई चीजें तुम्हारे दिल का परिचय देती हैं! वे चीजें तुम्हारी योग्यता के अनुरूप हैं। तुम्हारे उपहार ने सदा तुम्हें स्मरण रखने लायक़ कर दिया है।"

सेवक ने आचार्य का पत्र ले जाकर चूडामणि को दिया। उस पत्र को पढ़ने पर चूडामणि को मालूम हुआ कि उसने कैसी बड़ी भारी गलती कर दी है! उसी वक़्त वह ललिताचार्य के घर पहुँची और अपनी करनी के लिए क्षमा माँग कर उनके सामने साष्टांग दण्डवत किया।

ललिताचार्य ने उसे अपने हाथों का सहारा देकर ऊपर उठाया और कहा– "तुम एक कुशल नर्तकी हो, इस बात में जरा भी संदेह नहीं है।" इस पर आश्चर्य में आकर चूडामणि ने कहा–"आचार्यवर, अगर आपने यह बात संकेत रूप में ही सही राज दरबार में कह दी होती तो मैं कदापि ऐसी गलती कर न बैठती। संभवत: आपने सोचा होगा कि मेरे जैसे लोगों के भीतर जो सहज अहंकार होता है, उसे उभाड़कर हमारे अहंकार का दमन करना चाहिए।"

नर्तकी की बातें सुन आचार्य हंसकर बोले–" इस बात में कोई संदेह नहीं है कि

तुम्हारे अन्दर यह अहंकार है कि नृत्य करने में तुम्हारी समानता करनेवाले कोई नहीं है। तुमने अपने नृत्य के संबंध में भरे दरबार में मेरे द्वारा चंद बातें कहने की जो अभ्यर्थना की, इससे मैं तुम्हारे दिल की बात समझ गया। तुमने यह विचार किया था कि नर्तकी के रूप में पहले से ही यश प्राप्त करने वाली तुम मेरी प्रशंसा के द्वारा उस यश का विस्तार चाहती थीं! मेरा अनुमान सही है न?"

इस पर चूड़ामणि ने ललिताचार्य को प्रणाम किया और स्वीकृति के रूप में सर हिलाया।

"सुनो, मैं एक साधारण प्रेक्षक की भांति तुम्हारे चरणों की हर भंगिमा पर तन्मय हो तालियाँ नहीं बजा सकता हूँ न? इसका कारण यह है कि मैं नृत्य शास्त्र का पूर्ण ज्ञान रखता हूँ! नृत्याचार्य के रूप में मैंने तुम्हारे नृत्य की परिपक्वता की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और इसीलिए मैंने ऐसी कुछ नृत्य मुद्राओं की ओर इंगित किया जिनका ज्ञान तुम्हें नहीं था।" ललिताचार्य ने समझाया।

"महानुभाव, अज्ञानवश मैं आपके हृदय की महानता को समझ न पाई!" चूड़ामणि ने विनयपूर्वक निवेदन किया।

"चूड़ामणि, यह तुम्हारा अज्ञान नहीं, बल्कि जल्दबाजी है! नृत्य की बारीक़ियों को उस सभा में तुम्हारे सिवाय और किसी को भी जानने की जरूरत नहीं है! उन बारीकियों की ओर मैंने तुम्हारा ध्यान आकृष्ट किया, यदि तुमने ध्यान दिया होता, तब तुम्हें यह स्वयं विदित होता कि मैंने तुम्हारे नृत्य के कौशल की प्रशंसा ही की है! किसी भी दृष्टिकोण से देखोगी तो सभा में मेरे द्वारा व्यक्त किये गये विचार तुम्हारी प्रशंसा में ही हैं, न कि निंदा के!" ललिताचार्य ने समझाया। इसके बाद चूड़ामणि ने कुछ दिन तक ललिताचार्य के यहाँ नृत्य विद्या के उन अंशों का अध्ययन किया, जो वह नहीं जानती थी, तब उनके आशीर्वाद पाकर अपने देश को लौट गई।

# दहेज का मोह

मदन मोहन की शादी तै हो गई, जब वह वधू के गाँव के लिए चलने को हुआ, तब उसकी माँ शारदा बाई यह कहते खाट पर लेट गई कि उसकी तबीयत एकदम खराब हो गई है! मदन मोहन की समझ में न आया कि अब क्या किया जाय! वह अच्छी तरह से जानता था कि उसकी माँ को किसी तरह की बीमारी नहीं है, और वह एकदम स्वस्थ है! उसे सिर्फ़ इस बात का दुख था कि सास के रूप में उसे जो भेंट-उपहार दुलहिन के परिवार से मिलने चाहिए, वे मिल नहीं रहे हैं।

मदन मोहन ने अपनी माँ को कई तरह से समझाया, फिर भी वह हठ करके यही जवाब देती रही—"मेरी तबीयत खराब है, मैं सफर नहीं कर सकती। बहू तो एक न एक दिन हमारे घर आ ही जाएगी, तब मैं उसे देख लूँगी।"

मदन मोहन शारदा बाई का इकलौता पुत्र है! वह इधर तीन साल से किसी शहर में नौकरी कर रहा है! वह जिस मकान में किराये पर रहता है, उसके बाजू में एक गरीब परिवार रहता है। बचपन से ही अपनी माता से वंचित ललिता अपने छोटे भाइयों का पालन-पोषण कर रही है। उसके पिता की कमाई बहुत ही कम है। उसी में वह अपने घर चलाती आ रही है! वैसे वह देखने में ज्यादा सुंदर तो नहीं है, मगर उसकी सहनशीलता, घर चलाने की उसकी कुशलता से मदन मोहन बहुत प्रभावित हुआ।

मदन मोहन ने सोचा कि ललिता जैसी पत्नी का मिलना क़िस्मत की बात होगी। उसका विचार जानने के बाद ही मदन मोहन अपने माता-पिता को उसके घर ले गया। ललिता के घर से लौटते वक़्त

त्रिलोक चन्द

"दहेज दे न पायेंगे तो सास को मिलने वाले भेंट-उपहार के पीछे पाँच हज़ार तो देने होंगे!" शारदा बाई ने कहा।

"माँ, तुम भेंट-उपहार की बात भी भूल जाओ! शादी के खर्च मद्दे में ललिता के पिताजी के हाथ थोड़े से रुपये भी देने वाला हूँ।" मदन मोहन ने कहा।

इसके बाद शादी का मुहूर्त भी निश्चय हुआ। शादी के दिन शारदा बाई अपनी तबीयत के खराब हो जाने की बात कहकर शादी में जाने से इनकार करने लगी।

"माँ, जल्दी तैयार हो जाओ, उस शहर में वैद्यों की कोई कमी नहीं है। तुम्हारी पेटी व कपड़े-लत्ते मैंने चाचाजी के साथ दूसरी गाड़ी में पहले ही भेज दिया है!" यों मदन मोहन जल्दी मचाने लगा।

जब वे लोग ललिता के गाँव के इस पार की नदी के पास पहुँचे तब तक बाक़ी गाड़ियाँ नदी पार करके चली गई थीं। मदन मोहन के परिवार वाली गाड़ी जब नदी के पास पहुँची, तब नदी में अचानक बाढ़ आ गई। गाड़ीवाले ने कहा—"बाढ़ के उतर जाने तक हमें इस पार में ही रहना पड़ेगा।"

दूसरे दिन सवेरे ही शादी का मुहूर्त था। मदन मोहन ने चिंतित होकर गाड़ी वाले से पूछा—"सुनो भाई, यह बाढ़ कब तक उतर जाएगी?"

शारदा बाई ने कहा—"अगर ललिता के पिता पच्चीस हजार दहेज दे सकता है तो हम उस लड़की को अपनी बहू बना सकते हैं?"

मदन मोहन अचरज में आकर बोला—"माँ, ललिता के पिता पच्चीस हज़ार क्या, पच्चीस रुपये भी दहेज में नहीं दे सकते।"

ये बातें सुनने पर शारदा बाई का चेहरा तमतमा उठा, गरज कर बोली—"तब तो यह दरिद्र रिश्ता हमें बिलकुल पसंद नहीं है।"

मदन मोहन परेशान होकर बोला—"माँ, दहेज ही सब कुछ नहीं है। अगर मुझे शादी करनी ही है तो मैं ललिता के साथ ही करूँगा।"

"कह नहीं सकते बाबूजी, आधी रात तक भी उतर सकती है या चार-पांच दिन भी लग सकते हैं।" गाड़ीवाले ने कहा।

यह जवाब सुनकर शारदा बाई उत्साह में आकर उठ बैठी। नदी के किनारे थोड़ी दूर पर एक खपरैल वाला मकान था। गाड़ीवाला अपनी गाड़ी को उस घर के सामने ले गया।

मदन मोहन ने उस मकान के दर्वाजे पर दस्तक दी। इस पर अधेढ़ उम्र के एक आदमी ने दर्वाजा खोलकर पूछा– "तुम कौन हो? तुम्हें क्या चाहिए?"

मदन मोहन ने उसे सारी हालत समझाई और कहा–"नदी में बाढ़ के थम जाने तक हम लोग आपके घर में आश्रय लेना चाहते हैं!"

"हमारा घर एक क़िले के बराबर है। आप लोग यहीं पर शादी करना चाहे तब भी हमें कोई आपत्ति नहीं है?" यों कहकर जोर से पुकारा–"बेटी रागिनी, सुनो, हमारे घर मेहमान आ गये हैं!"

भीतर से रागिनी आ पहुँची और मदन मोहन के माँ-बाप को प्रणाम किया। उसकी उम्र बीस साल से ज्यादा न होगी उसका सौंदर्य अद्भुत था।

शारदा बाई के मना करने पर भी उस युवती ने रसोई बना कर सब को खिलाया।

एक बड़े कमरे में बिस्तर झाड़कर बिछाया और यह कहते दूसरे कमरे में चली गई–"आप लोग बिलकुल संकोच मत कीजिएगा। किसी चीज़ की जरूरत हो तो बुला लीजिए! मैं बगल के कमरे में ही रहती हूँ।"

रागिनी को देखते ही शारदा बाई के मन में तरह-तरह के विचार उठने लगे। यह तो सुंदर कन्या है. तिस पर इकलौती बेटी सी लगती है। भेंट-उपहार की बात तो अलग है, इस कन्या के साथ मेरे बेटे की शादी कर ले तो एक सुंदर बहू के साथ ख़ूबसूरत मकान भी हमारा हो जाएगा। यों विचार कर शारदा बाई उत्साह में

आकर बोली–"लगता है कि हमारी भलाई के वास्ते ही नदी में बाढ़ आ गई है।"

"माँ, तुम यह क्या कहती हो? नदी में बाढ़ थम जाएगी तो हम लोग मुहूर्त के समय तक उस शहर में पहुँच सकते हैं न?" मदन मोहन ने टोका।

"बेटा, उसी मुहूर्त तक रागिनी के गले में मंगल सूत्र बाँध दे तो शादी संपन्न हो जाएगी।" शारदा बाई बोली।

मदन मोहन अपनी माँ की बातें सुन चौंक पड़ा और गुस्से में आकर बोला–"माँ, तुम पागल तो नहीं हो गई हो?"

शारदा बाई भी भड़क उठी और बोली–"यह कन्या बहुत खूबसूरत है, तिस पर आदर-सत्कार करना बहुत ही अच्छे ढंग से जानती है? उल्टे दहेज देने की हैसियत भी ये लोग रखते हैं।"

"शादी का मतलब सिर्फ़ दहेज़ वसूल करना ही नहीं होता, माँ। मैं जानता हूँ कि मेरे पिताजी को नानाजी ने कितना दहेज दिया था!" मदन मोहन ने पूछा।

अपने बेटे के मुँह से ये बातें सुन कर शारदा बाई सहम कर बोली–"उन दिनों की बात और थी। सवेरा होते ही मैं रागिनी के पिता से बात करके शादी के लिए उसे मना लूँगी। अगर तुम लोग मेरी बात न मानोगे तो मैं इस नदी में कूद कर जान दे दूँगी।"

मदन मोहन की समझ में न आया कि इस नई समस्या का हल क्या होगा? वह सोचते-सोचते सो गया। जब उसकी आँख खुली तो देखता है कि सवेरा होने को है। उसने खिड़की में से झांककर देखा, नदी में बाढ़ के थमने की सूचना देते पुल स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था।

तब तक शारदा बाई भी जाग चुकी थी, वह अपने बेटे मदन मोहन से बोली–"तुम शायद सफर की बात सोचते होगे! यह सब चलने का नहीं! तुम्हारी शादी रागिनी के साथ होकर ही रहेगी!" इन शब्दों के साथ रागिनी को पुकारते

मकान के भीतर चली गई। इसके बाद शारदा बाई की चिल्लाहट सुनकर मदन मोहन और उसके बाप दौड़कर उसके पास पहुंचे। सारा मकान सुनसान था। मकान के पिछवाड़े के किवाड़ एक दम खुले पड़े थे। वे लोग अपने साथ जो पेटी लायें थे, वह गायब थी। कांपने वाली शारदा बाई के हाथ में कागज का एक टुकड़ा था। मदन मोहन ने उस कागज़ को अपने हाथ में लेकर पढ़ा। उस में लिखा था–"यह मकान हमारा नहीं है! हमें जब मालूम हुआ कि इस मकान के लोग तीर्थाटन पर चले गये हैं, तब हमने नकली चाबी से मकान का ताला खोल दिया। पर मकान के अन्दर हमें एक भी क़ीमती चीज दिखाई नहीं दी। हमने सोचा कि शादी में जाने वाले आपके बक्स में क़ीमती चीजें होंगी। हम लोग बक्से के ताले को यहीं पर तोड़ कर आप लोगों की नींद में खलल डालना नहीं चाहते थे। इसलिए उठा कर ले जा रहे हैं! लगता है कि हमारी भलाई के वास्ते ही नदी में बाढ़ आ गई है।"

अपनी माँ को आँसू बहाते देख मदन मोहन बोला–"माँ, तुम फ़िक्र मत करो! तुम्हारे सारे गहने मैंने चचाजी के साथ पहले ही भेज दिया है। तुम जिस खूब सूरत कन्या को अपनी बहू बनना चाहती थी, वह ससुराल में आने के दूसरे ही दिन सारा घर लूट कर चली गई है।"

शारदा बाई को इस बात का संतोष हुआ कि उसके क़ीमती गहने और साड़ियाँ सुरक्षित हैं! तब वह बोली–"बेटा, एक बहुत बड़ा खतरा टल गया है! इसके साथ मेरे दिल से दहेज का मोह भी जाता रहा। चलो, मुहूर्त का समय निकट आ रहा है। मेरी होने वाली बहू को मेरे सारे गहनों से सजाना है।"

अपनी माँ के भीतर इस परिवर्तन को देख मदन मोहन बड़ा खुश हुआ। उसके साथ उसके पिता भी खुशी के मारे फूल उठे।

# राजा का आश्रय

वज्रगिरि नामक नगर में धनंजय और मृत्युंजय नामक दो व्यापारी थे। राजपथ पर उनकी दूकान थीं और दोनों सुगंध द्रव्यों का व्यापार करते थे।

एक दिन एक राजभट धनंजय के पास आकर बोला-"महाराजा ने आपको शाम को अपने महल में आकर मिलने का आदेश दिया है! शाम को ज़रूर राजमहल में पहुँच जाइये।"

शाम के होते ही धनंजय राजमहल में चला गया और थोड़ी देर बाद दूकान को लौट आया।

मृत्युंजय ने भांप लिया कि राजा ने राजभट के द्वारा धनंजय को राजमहल में बुलवा लिया है, इसका कारण जानने के ख्याल से मृत्युंजय ने धनंजय के पास जाकर पूछा-"दोस्त, यह बताओ, राजा ने आपको किसलिये बुला भेजा था?"

"मेरे और राजा के बीच कई गुप्त बातें होंगी! उन्हें तुम्हें बताने की ज़रूरत क्या है?" इन शब्दों के साथ धनंजय ने मृत्युंजय को डांट दिया।

इसके बाद हफ़्ते में एक बार धनंजय के पास राजभट का आना और शाम के वक़्त धनंजय के राजमहल में हो आना-यह सब मृत्युंजय देखता रहा।

खूब सोच-विचारने पर भी मृत्युंजय की समझ में यह बात न आई कि राजा के पास धनंजय क्यों आया-जाया करता है। एक दिन उसने अपनी पत्नी को यह खबर सुनाकर कहा-"मेरे माथा पच्ची करने पर भी इसके पीछे का रहस्य मेरी समझ में नहीं आ रहा है। तुम भी अपना दिमाग लड़ाकर सोचकर देखो तो सही!"

इस पर मृत्युंजय की पत्नी ने अपने पति की ओर विस्मयपूर्वक देखते हुए कहा-

लक्ष्मीकांत वर्मा

"उफ़! इस छोटी सी बात के लिए दिमाग को खराब करने की क्या ज़रूरत है? धनंजय अगर हफ़्ते में एक बार राजा के पास हो आता है, तो इसका मतलब है कि उसे राजा का आश्रय मिल गया है!"

मृत्युंजय के मन में भी इस बात का विश्वास जम गया कि उसकी पत्नी का कहना सच होगा! फिर क्या था, उसने अपनी पत्नी की बुद्धिमत्ता की बड़ी तारीफ़ की।

"आप मेरी तारीफ़ करते हैं तो इससे हमारा कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। ऐसा कीजिए कि आप भी राजा का आश्रय पाने के लिए धनंजय को खुश कीजिए! इसके द्वारा आइंदा हमारा बड़ा फ़ायदा होगा!" मृत्यंजय की पत्नी ने सुझाया।

दूसरे दिन मृत्युंजय ने अपनी पत्नी के द्वारा बहुत सारी मिठाइयाँ बनवाईं; बाज़ार में जाकर दस रुपये के फल खरीदे, एक टोकरी में भरकर धनंजय के घर पहुँचा।

इसके पहले मृत्युंजय धनंजय के घर की ओर कभी पटकता तक न था, आज फल और मिठाइयों के साथ आये देख अचरज में आ गया और पूछा–"दोस्त, कैसे आना हुआ? ये सब क्या हैं?"

"मित्रवर, मैं यों तो कई दिनों से तुम्हारे घर आना चाहता था, पर मुझे आज

ही फ़ुरसत मिली। ये फल और मिठाइयाँ मैं बच्चों के वास्ते लाया हूँ! इतना खर्च उठा न सकनेवाला गरीब मैं थोड़े ही हूँ?" मृत्युंजय ने कहा।

इसके बाद मृत्युंजय धनंजय के साथ इधर-उधर की बातें करके अपने घर चला आया। उस दिन से मृत्युंजय अक्सर धनंजय के घर आया-जाने लगा। जाते वक़्त बच्चों के वास्ते फल या मिठाइयाँ कुछ न कुछ ले जाता था।

थोड़े दिन बाद मृत्युंजय ने नाम राज दरबार के एक अधिकारी के यहाँ से पेशे के कर के रूप में सौ मुद्राएँ जमा करने की ताकीद आई।

दूसरे दिन मृत्युंजय दूकान पर चलते हुए पत्नी से बोला—"मुझे शाम को कर वसूलने वाले अधिकारी के यहाँ जाकर कर चुकाना है। मेरे घर लौटने में थोड़ी देरी हो सकती है।"

पत्नी ने आश्चर्य में आकर पूछा—"आप के द्वारा राजा को कर चुकाना कैसे?"

पत्नी की बात मृत्युंजय समझ न पाया, खीझ कर बोला—"बात तुम साफ़-साफ़ क्यों नहीं बता देती?"

"धनंजय आप का दोस्त है। उसे तो राजा का आश्रय प्राप्त है। ऐसी हालत में आप अगर कर न चुकायेंगे तो कोई भी अधिकारी आप का क्या बिगाड़ सकता है? मैं समझती हूँ कि राजा आप पर कोई करिवाई न करेंगे।" मृत्युंजय की पत्नी ने कहा।

मृत्युंजय को अपनी पत्नी की बातें अच्छी लगीं। उसने कर नहीं चुकाया। एक हफ़्ते बाद मृत्युंजय के पास एक राजभट आया और बोला—"आप को राजा ने शाम के वक़्त अपने महल में मिलने का आदेश दिया है!"

मृत्युंजय यह सोचकर मन ही मन खुश हुआ कि धनंजय की वजह से उसे भी राजा का आश्रय प्राप्त होने जा रहा है, वह शाम को खुशी-खुशी राजमहल में पहुँचा।

राजा ने मृत्युंजय को देखते ही कहा—"जानते हो, मैंने तुम्हें किसलिए यहाँ पर बुला भेजा है? यह सारा महल तुम्हारे द्वारा झाड़ू देने के लिए। पिछले हफ़्ते तक धनंजय नामक व्यापारी यह काम करता रहा। इस हफ़्ते से यह काम तुम्हें करना होगा। इस बात की याद दिलाने के लिए हर हफ़्ते तुम्हारे पास राजभट पहुँचता रहेगा। कर चुकाने से बचने वाले तुम जैसे व्यापारियों के लिए यही सही सजा है।"

उस दिन से राजमहल साफ़ करने की जिम्मेदारी मृत्युंजय पर आ पड़ी।

उधर यह सारी गड़बड़ हो रही थी, फिर भी नौकर गहरी नींद सो रहा था। उसके बाज़ू में ही पत्तों व फूलों से भरी गणेशजी की मूर्ति थी। सारी जमीन गन्ने के रस से भीगकर कीचड़ जैसी हो गई थी। पहरा देनेवालों को बुलवाकर पूछा गया, तो उन लोगों ने जवाब दिया– "बड़ी रात बीतने तक हम जागते रहें। हमें बिल्कुल पता नहीं कि न मालूम कब हमारी आँख लग गई। इस बीच हाथी के चिंघाड़ने की आवाज़ सुनकर हमारी आँखें खुल गई। उस अंधेरे में एक बहुत ही बड़ा सफेद हाथी हमें दिखाई दिया। वह सारी ईख चर रहा था। हमें डर लगा; इसलिए हम वहाँ से भाग खड़े हुए।"

जमीन्दार के भीतर बड़ा परिवर्तन हुआ। वह नौकर के सामने गिरकर साष्टांग दण्डवत करने लगा। जमीन्दार की पत्नी विघ्नेश्वर की मूर्ति को प्रणाम करके बोली–"भगवान, इतने साल बाद आपने हम पर अनुग्रह किया, हम लोग धन्य हो गये।"

इस अद्भुत घटना का समाचार सुनने पर वहाँ लोगों की भीड़ लग गई। हाथी के पैरों के पड़ने से जमीन में जो गड्डे हो गये थे, उनमें गन्ने का रस भर गया था, लोग उस रस को तीर्थ के रूप में सेवन करते हुए गन्ने के थोथे को विघ्नेश्वर का महा प्रसाद मानकर अपने साथ ले जाने लगे।

२३. विचित्र विनायकीय

बिघ्नेश्वर ने नौकर को अपनी सूँड़ से निकट खींच लिया, अभय हस्त की मुद्रा में उसका सिर निहारते हुए बोले–"बेटा, जाति, वर्ण, आचार, रीति-रिवाज आदि मैंने कभी पैदा नहीं किये, इन सबकी कल्पना मनुष्य ने ही की है! मेरे सामने छोटे-बड़े का कोई भेद-भाव नहीं है। इसीलिए मैंने तुम्हें दर्शन दिये हैं!" यों कहकर वे अंतर्धान हो गये।

सब लोग हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए नौकर से बोले–"तुम्हारी वजह से हमें गणेशजी के दर्शन हुए हैं!"

पावन मिश्र ने इन शब्दों के साथ अपनी कहानी समाप्त की–"इक्षु का मतलब ईख है। सहस्र इक्षु का मतलब एक हज़ार ईखों वाला गणपति! इसलिए वे सहस्रेक्षु गणपति के रूप में पूजे गये। इसके बाद वहाँ पर ईख हाथ में लिये हुए विनायक की प्रतिमा प्रतिष्ठापित हुई और वहाँ पर एक विशाल मंदिर बनाया गया।"

वैसे पावन मिश्र ने मंदिर के मण्डप में चित्रित सभी चित्रों की कहानियाँ सुनाईं, लेकिन मंदिर के मुख द्वार पर चित्रित चित्र की कहानी रह गई थी। प्रति दिन उस चित्र को निर्निमेष देखने वाला एक युवक पावन मिश्र के निकट पहुँचा, उसके चरणों में प्रणाम करके बोला–"महाशय,

नौकर की पत्नी अपने बच्चे के साथ विघ्नेश्वर की प्रतिमा को प्रणाम करके बोली–"भगवान, मैंने आज तक कभी एक पूजा-पत्र देकर आपकी अर्चना नहीं की है। आपके वास्ते मैंने जो गन्ना भेजा, वह आपको प्राप्त नहीं हुआ। हाथी के रूप में ही सही, आप सबको दिखाई दिये; पर मुझे दिखाई नहीं दिये। मैं तो मूर्खा हूँ, गहरी नींद सो रही थी।" यों कहकर वह बच्चे की तरह फूट-फूट कर रोने लगी।

उस समय विघ्नेश्वर की प्रतिमा की जगह गन्ना लेकर सामने विघ्नेश्वर का साक्षात्कार हुआ। नौकर का लड़का जो गन्ना ले गया था, वही उनके हाथ में था।

इस मंदिर के मण्डप के चित्रों को किसने चित्रित किया है? उस महा शिल्पी की कहानी सुनने की मेरी बड़ी कामना है! मुख द्वार पर अँकित चित्र की भी कहानी सुनाने की कृपा करें !"

इस पर पावन मिश्र उस युवक की ओर स्नेह पूर्ण दृष्टि प्रसारित कर बोला– "बेटा, तुम्हारी इन बातों से ऐसा मालूम होता है कि तुम एक चित्रकार हो। मुख द्वार पर अंकित चित्र मेरे लिए भी बहुत प्यारा है। तुमने जिस महा शिल्पी की बात उठाई, उसकी अपनी एक अनोखी कहानी है। सुनो!" पावन मिश्र ने बोलना शुरू किया–"साधुओं की जमात में एक बार चौदह साल का किशोर वातपि नगर में आया और वह हमेशा के लिए गणपति के मंदिर में रह गया।

वह खुद अपने नाम-धाम का पता जानता न था। उसके भाल पर किसी बड़े घाव का निशान था जिससे ऐसा मालूम हो रहा था कि चोट के लगन से वह अपनी स्मृति खो बैठा है। वह बोलता न था, हमेशा दीवरों पर चित्र अंकित किया करता था। मण्डप की फ़र्श की चट्टानों पर चित्र खींचते वक़्त उसका चेहरा पूर्ण चन्द्रमा जैसे दमकता रहता। इसलिए उसे लोग चित्रानंद पुकारते थे, सदा विघ्नेश्वर के चित्र बनाते रहने के कारण उसे विघ्नेश्वर चित्रकार कहते थे। उसका एक नाम विचित्र भी था। अंत में विचित्र नाम ही उसके लिए शाश्वत हो गया।

उस समय तक गजानन पंड़ित काफी वृद्ध हो चुका था। वह रोज शाम को अपने घर पर ही बच्चों को विघ्नेश्वर की कहानियाँ सुनाया करता था। चबूतरे पर बैठे विचित्र उन कहानियों को बड़े ही ध्यान से सुनाया करता था। दूसरे दिन उस कहानी–संबंधी चित्र किसी दीवार पर प्रत्यक्ष हो जाया करता था।

मौक़ा पाकर वे लोग भी छोटे-छोटे चित्र बनाते। इस तरह गाँव के कई बच्चे चित्रकला में प्रवीण हो गये।

दिन-भर विचित्र वीर गली की दीवारों पर कोयले या किसी चीज़ से चित्र बनाते, वातापि गणपति के मंदिर में बटने वाला प्रसाद खाकर अपना पेट-भर लेता, रात को मंदिर के मण्डप की सीढ़ियों पर या गाँव के चबूतरों पर सो जाता।

वह जिस बस्ती में सोता, वे मकान ज्यादातर चर्मकारों, कुम्हारों या निम्न जाति के लोगों के होते। वहाँ के सब लोग विचित्र को अपनी जान से ज्यादा प्यार करते थे। वह रात के किसी भी वक़्त पहुँच जाता, तब वे लोग उसको खाना खिलाते और उसके सोने का उचित इंतज़ाम करके तब सो जाते थे।

इस तरह विचित्र पल कर बड़ा हो गया। वैसे विचित्र अपने संबंध में थोड़ी सी भी जानकारी बिलकुल न रखता था, मगर उसके माँ-बाप, भाई वगैरह सब लोग जीवित थे।

दर असल वातापि नगर से थोड़ी दूर पर बसे एक गाँव में मध्य वित्त परिवार में विचित्र का जन्म हुआ था। अपने पिता की प्रेरणा से उसने बचपन में ही चित्र बनाना सीख लिया। आखिर भाई

गजानन पंडित विचित्र के प्रति अत्यंत वात्सल्य भाव रखता था। घर के भीतर बुलाने पर भी वह ड्योढी के बाहर बैठे कहानियाँ सुनता और यही जवाब देता–"पंडितजी, यहीं पर बैठे सुनने पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है, मानो आप मुझ अकेले को ही ये कहानियाँ सुना रहे हैं!" विचित्र के चित्रों को देख गजानन पंडित खुशी से फूला न समाता और विशेष रूप से उसे विघ्नेश्वर से संबंधित कई कहानियाँ सुनाया करता था।

विचित्र के पीछे सदा बच्चों की भीड़ लगी रहती। उसके चित्रों को चुपचाप देखते हुए बच्चे प्रसन्न हो जाते और

व भाभियों ने खीझ कर उसे घर से निकाल दिया। बालक विचित्र बचपन से ही विघ्नेश्वर के प्रति भक्ति रखता था। वह वातापि नगर के लिए चल पड़ा। रास्ते में उसे कहीं खाना नहीं मिला। इस वजह से वह इतना कमज़ोर हो गया, एक जगह वह एक चट्टान पर गिर पड़ा। चोट के लगने से वह बेहोश हो गया। ऐसी हालत में साधुओं की एक जमात ने उसे बचाया और वे लोग विचित्र को वातापि नगर में ले आये। यही उसके बचपन की कहानी है।

एक वर्ष वातापि नगर में विनायक चतुर्थी के दिन एक प्रदर्शनी हुई।

उस उत्सव के दिन आदम कद की गणेश की मूर्तियाँ निर्मित करनी थीं। वे मूर्तियाँ चित्रकला की रमणीयता से पूर्ण हों और विविध प्रकार के वर्णों से सुशोभित हों, ऐसी मूर्तियों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। उनमें से श्रेष्ठ मूर्ति का चुनाव करके नव रात्रि के उत्सव मनाने वाले प्रबंधक उस मूर्ति के निर्माता को एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ भेंट स्वरूप देने की परिवाटी थी। साथ ही नगरपालिका के अधिकारी उस शिल्पी को रत्न खचित स्वर्ण कंगन पुरस्कार के रूप में दिया करते थे।

उस अवसर पर मूर्तियों की प्रतियोगिता की जो प्रदर्शनी हुई, उसमें दरबारी शिल्पी और देश-भर के कलाकारों ने बहुमूल्य वर्ण व रंग, सोने के मुलम्मे तथा रंगीन पत्थर मंगवा कर प्रतिमाएँ बनाईं और उस प्रदर्शनी में प्रदर्शित किया।

शिल्पी विचित्र के एक कुंभकार मित्र था। विचित्र के आदेशानुसार उसने मिट्टी से विघ्नेश्वर की प्रतिमा बनाई। विचित्र ने चूना, हरी मिट्टी, लाख तथा पत्तों के रसों का प्रयोग करके मूर्ति को विविध प्रकार के वर्णों से सजाया।

मगर विचित्र के द्वारा निर्मित उस रंगीन प्रतिमा को प्रमुख शिल्पियों ने

प्रदर्शनी में रखने से मना किया। पर विचित्र ने प्रदर्शनी के प्रबंधकों से निवेदन किया–"महाशयो, कृपा करके मेरी प्रतिमा को भी सभी प्रतिमाओं के अंत में प्रदर्शित करवाने का इंतजाम कीजिए। मैंने भी अपनी थोड़ी सी श्रद्धा व भक्ति से प्रेरित होकर अपनी शक्ति भर विघ्नेश्वर की प्रतिमा में रंग भर दिये हैं। इसलिए विघ्नेश्वर की उन महान प्रतिमाओं की पंक्ति के छोर पर अपनी प्रतिमा को भी देखने की कामना करता हूँ! इससे बढ़कर मेरे मन में और कोई कामना नहीं है!"

मगर प्रमुख शिल्पियों ने यह कहकर विचित्र को दुत्कार दिया–"तुम्हारे नाम-धाम, जाति-वर्ण और गोत्रों का कुछ पता नहीं है! तुम हमेशा नीच जाति के लोगों के बीच उठते-बैठते रहे हो! ऐसे निम्न वर्णवाले तुम्हारे हाथों के द्वारा निर्मित प्रतिमा को उच्च वंश के प्रतिष्ठित महान शिल्पियों के द्वारा निर्मित प्रतिमाओं के बीच प्रदर्शित करने की योग्यता तुम नहीं रखते!" ये बातें सुन विचित्र का दिल बैठ गया। वह बड़ा निराश हो रो बैठा।

इस पर शिल्पी विचित्र को उसके कुम्भकार मित्र ने समझाया–"प्रदर्शनी के मण्डप में तुम्हारी प्रतिमा को नहीं रखा तो कोई बात नहीं; चलो, हम इस मूर्ति को किसी और जगह रखेंगे।" इसके बाद प्रदर्शनीशाला के निकट एक केले के पौधे के तने के पास उसने विघ्नेश्वर की प्रतिमा को रखा और विचित्र को वहीं पर अपने साथ बैठा लिया।

उधर प्रदर्शनीशाला में बड़े लोग भारी संख्या में जमा होकर वहाँ की प्रतिमाओं को देखते, उनके निर्माता शिल्पियों के द्वारा प्रयोग किये गये वर्णों की क़ीमत का मूल्यांकन करते, उन शिल्पियों के पद, उनके उच्च वर्ण और उनकी कला की प्रशंसा करते थकते न थे, मगर सारे बच्चे विचित्र के द्वारा निर्मित विनायक की प्रतिमा के पास पहुँच कर कोलाहल करते
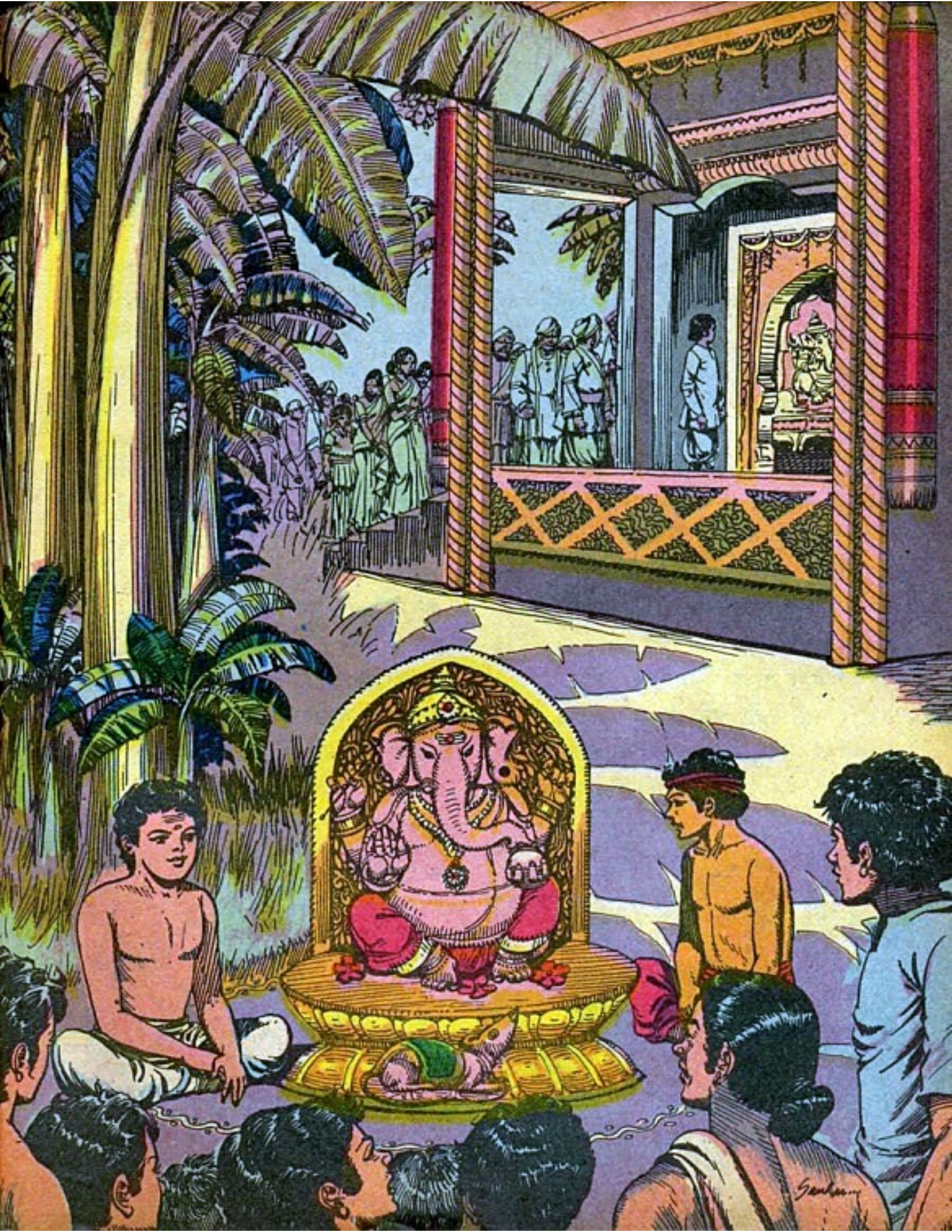
हुए बड़ी उत्सुकता के साथ उस प्रतिमा का अवलोकन करने लगे। उस समय आसमान से टपकी जुड़वीं विद्युत लताओं जैसी दो युवतियाँ प्रदर्शनी शाला में आ पहुँचीं। उनके शरीरों पर अपूर्व रत्नाभरण आँखों को चौंधियाने लगे।

लोग उन तरुणियों को देख विस्मय में आ गये। तब उन रमणियों में से बड़ी युवती बोली–"हम कलानंद नगर की निवासिनियाँ हैं! हमें जो प्रतिमा पसंद आयेगी, उसे दस हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार के रूप में समर्पित करेंगी। इसी वास्ते हम यहाँ पर आ गई हैं।" इन शब्दों के साथ अपने हाथ में सुशोभित सोने की जरीदार थैली को हिलाने लगी। इस पर वहाँ पर उपस्थित सभी शिल्पी अपनी प्रतिमाओं के पास जा खड़े हुए।

"मेरी दीदी प्रसन्नवदना बड़ी गायकी हैं। यही नहीं, पेटू भी है! नैवेद्य पुष्टि, प्रतिमा पुष्टि के बाद ही गात्र पुष्टि है अपनी तोंद बढ़ाकर गाकर देखो। इन सिद्धांतों के लिए सच्चा उदाहरण मेरी दीदी प्रसन्न वदना है!" यों कहते छोटी युवती ने अपने पैरों में बंधी घुंघुरों की मधुर ध्वनि की।

"मेरी छोटी बहन मोहना बड़ी बातूनी है। इससे बढ़कर वह एक कुशल नर्तकी है! देखने में वह छोटी मुन्नी जरूर लगती है, मगर वह मुझको ही उठाकर चक्र की तरह घुमा सकती है! ऐसी सामर्थ्य रखती है वह! नृत्य में उसका कौशल देखते ही बनता है।" प्रसन्न वदना ने कहा।

"हमारे द्वारा गवाना और नृत्य कराना इंद्र और कुबेर के लिए भी संभव नहीं है! हमने मनौती की है कि ऐसे गीत व नृत्य हम उसी प्रतिमा के सामने प्रदर्शित करती हैं जो प्रतिमा हमें अच्छी लगती है!" मोहना ने कहा।

उनकी बातों को मंत्र-मुग्ध हो सुनने वाली भीड़ अनायास ही हट गई। इस पर दोनों युवतियाँ आगे बढ़ीं।

(अगले अंक में समाप्य)

# अनोखा फ़ैसला

प्राचीन काल में सिंहल देश में एक व्यापारी रहा करता था। उसने समुद्री व्यापार में लाखों रुपये कमाये। जब उसकी मौत निकट आई, तब अपने बेटे जयपाल को बुलाकर सलाह दी–"बेटा, तुम भी मेरे ही जैसे समुद्री व्यापार करो, मगर भूल से भी वंचक महानगर की ओर मत पटको।"

अपने पिता की मौत के बाद जयपाल के पास जो चार नौकाएँ थीं, उनके द्वारा समुद्री व्यापार करने लगा। उसके मन में यह कौहतूल पैदा हुआ कि अखिर देख तो ले कि वंचक महानगर में जाने पर क्या होता है? वैसे वह स्वभाव से ही बड़ा अक़्लमंद था। उसके मन में यह विश्वास था कि अगर कोई उसे धोखा दे तो, उसका बदला भी ले सकता है। इसी विश्वास को लेंकर वह अपनी चार नौकाओं को लेकर वंचक महानगर की ओर चल पड़ा। सूर्योदय का समय था। नौकाओं को बंदरगाह में छोड़ धनुष-बाण लेकर जयपाल समुद्र के तट पर शिकार खेलने चल पड़ा। एक जगह उसे एक बगुला दिखाई पड़ा, वह समुद्र की मछलियों का शिकार कर रहा था। जयपाल ने निशाना बना कर बगुले पर बाण चलाया। बगुला मर गया, पर समुद्र के जल में गिर गया।

इस पर एक मछुआरा जयपाल के पास दौड़े आ पहुँचा और पूछा–"महाशय, आप कौन हैं? मेरे पिताजी को आपने मार डाला। मैं राजा से शिकायत करूँगा।"

"क्या वह बगुला तुम्हारा पिता है?" जयपाल ने अचरज में आकर पूछा।

"जी हाँ, पिछले जन्म में ये मेरे पिता थे, इस जन्म में बगुले का रूप धरकर मछलियों के शिकार खेलने में वे मेरी मदद कर रहे हैं।" मछुए ने जवाब दिया।

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

कभी तुम्हारे कान के बारे में कुछ नहीं कहा था।"

"सुनो, तुम मेरा कान वापस न दिला ओगे तो तुम पर मैं नालिश करूँगा।" यों कह कर वह आदमी चला गया।

इसके बाद जयपाल थोड़ी दूर आगे बढ़ा ही था, कि एक औरत सामने आ पहुँची, बोली—"सुनो बेटा, सोलह साल पहले तुम्हारे पिताजी यहाँ पर आये थे, मेरे साथ शादी करके अपने रास्ते चले गये। मुझे अपनी जीविका के वास्ते दस हज़ार रुपये हर्जाना देने का वादा किया था, वे रुपये तुम दोगे या मैं शिकायत करूँ?"

जयपाल को गुस्सा आया। वह गरज कर बोला—"तुम चाहो, किसी से भी शिकायत कर लो।"

इसके बाद वह नगर में प्रवेश करके पैदल चला जा रहा था, तब सामने से एक आदमी गुजरा। उसने कहा—"बेटा, तुम कितने दिन बाद दिखाई दिये? बहुत समय पहले मैंने अपना दायां कान तुम्हारे पिता के यहाँ गिरवी रख कर दस रुपये कर्ज लिया था, मैं वे दस रुपये वापस कर देता हूँ, मेरा कान मुझे वापस पिला दो।"

जयपाल ने चकित होकर उस आदमी की ओर देखा। उसके केवल बायाँ कान बचा था। उसने कहा—"मेरे पिताजी ने

जयपाल इस दुष्टता को सहन न कर पाया, डांट कर बोला—"जाओ, मैं तुम्हें एक पैसा भी नहीं दूंगा।" यों कह कर वह अपनी नावों के पास लौट गया। वहाँ पर नाई उसने पूछा—"हुजूर, क्या दाढ़ी बनवा लोगे?"

"क्या लोगे?" जयपाल ने पूछा।

"बस, मुझे खुश कीजिएगा।" नाई ने जवाब दिया।

जयपाल हजामत करा कर नाई के हाथ एक रुपये देने को हुआ, पर नाई ने नहीं लिया। इस पर जयपाल ने पाँच रुपये देना चाहा, फिर भी नाई ने लेने से इनकार किया। जयपाल ने क्रोध में आकर कहा—

"मैं तुम्हें एक कौडी भी न दूंगा, चाहे जहाँ भी तुम जाकर शिकायत कर लो।"

मछुआ, कान कटा, औरत और नाई– इन चारों ने राज दरदार में जाकर राजा से जयपाल के प्रति शिकायत की, राजा ने जयपाल को दरबार में बुला भेजा। सुनवाई शुरू हुई, सब से पहले मछुए ने राजा से बिनती की–"महाराज, मेरे मृत पिता जल बगुले का जन्म धारण कर कई सालों से मछलियाँ पकड़ने में मेरी मदद किया करते थे। जयपाल ने उस बगुले को मार कर मुझे बहुत बड़ा नुक़सान पहुँचाया है।"

राजा ने जयपाल की ओर मुखातिब होकर अपना फ़ैसला सुनाया–"तुम हर्जाने के रूप में इस मछुए को अपनी एक नाव दे दो।"

इसके बाद कान कटे आदमी ने फ़रियाद की–"महाराज, मैंने जयपाल के पिता के पास अपने दायें कान को गिरवी रखकर दस रुपयें कर्ज लिया था। मैं इन का कर्ज चुकाने केलिएं तैयार हूँ। मगर ये मेरा कान दिलाने से इनकार करते हैं और उल्टे धमकी दे रहे हैं; आप मेरे प्रति न्याय कीजिए।" इस पर राजा ने अपना फ़ैसला सुनाया कि कान कटे को भी हर्जाना के रूप में एक नाव दे दे। इसके बाद जयपाल के विरुद्ध एक औरत ने फ़रियाद

की। राजा ने उस औरत को भी हर्जाने के रूप में एक नाव देने का जयपाल को आदेश दिया।

सबसे अंत में नाई ने शिकायत की– "महाराज, इस महानुभाव ने मेरे द्वारा हजामत बनवाई और वचन दिया था कि बदले में ये मुझे खुश करेंगे। इसलिए आप यदि मुझे इन के द्वारा एक नाव दिलायेंगे तो मैं खुश हो जाऊँगा। इस से कम मूल्य पर मैं कभी खुश नहीं हो सकता।"

इस पर राजा ने अपना फ़ैसला सुनाया– "नाई का कहना वाजिब मालूम होता है। इसलिए जयपाल को चाहिए कि वह एक नाव नाई को भी दे।"

अब जयपाल के गले में एक रत्नहार को छोड़ कुछ न बचा था। वह सोच ही रहा था कि इस हालत में क्या किया जाय, तभी राज दरबार में राजा के दस साल का पुत्र आ पहुँचा।

फिर क्या था, झट से जयपाल ने अपने गले का रत्नहार उतार कर राजकुमार के कंठ में पहना दिया। दरबार में उपस्थित सब लोगों ने तालियाँ बजाकर हर्ष ध्वनि की।

राजा ने अपने पुत्र को निकट बुलाया और उस के गले की शोभा बढ़ाने वाले रत्नहार को देख वे भी बहुत प्रसन्न हुए।

जयपाल ने दरबारियों की ओर मुड़ कर पूछा–"मैंने राजकुमार को यह रत्नहार भेंट किया है, इसे देख खुश न होने वाला कोई व्यक्ति इस दरबार में है?"

सब लोग एक स्वर में चिल्ला उठे–"नहीं है, नहीं है, हम सब खुश हैं।"

इस पर जयपाल ने नाई की तरफ़ मुखातिब हो पूछा–"सुनो, तुम भी खुश हो या नहीं?"

नाई को लाचार होकर कहना पड़ा कि वह भी खुश हो गया है, इसके बाद जयपाल ने राजा से निवेदन किया–"महाराज, मैंने नाई को खुश किया है। इसलिए शायद उसे मुझे एक नाव देने की ज़रूरत नहीं है।"

"हाँ, हाँ, तुम ठीक कहते हो।" राजा ने जवाब दिया।

इसके बाद जयपाल ने उस औरत के समीप जाकर कहा–'माताजी, आपके हर्जाना के संबंध में मुझे एक बात निवेदन करनी है। मैं आप को दस हज़ार रुपये ज़रूर दूंगा, लेकिन मेरे सामने एक कठिनाई आ गई है। हमारे देश के रिवाज़ के अनुसार पत्नी को पति के साथ सहगमन करना होगा। दुर्भाग्य से एक साल पहले मेरे पिताजी का देहांत हो गया है। इसलिए आप अपनी चिता बना कर उस में जल जायेंगी तो मैं आप के वारिस को दस हज़ार रुपये सौंप दूंगा।"

"मैं ज़बर्दस्ती मरने को कदापि तैयार नहीं हूँ।" औरत ने साफ़ जवाब दिया।

इस पर जयपाल ने राजा से निवेदन किया–"महाराज, मेरे ख्याल से मुझे इस औरत को हर्जाना चुकाने की कोई जरूरत नहीं है।" राजा ने जयपाल की बात मान ली।

तदनंतर जयपाल ने कान कटे व्यक्ति को बुला कर कहा–"भाई साहब, आप का कान दिलाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मेरे पिताजी के जमाने में कई हज़ार लोगों ने आप के जैसे अपने कई कान गिरवी रखकर कर्ज लिये है। उन में से आप के कान को पहचान कर ढूंढ निकालना संभव नहीं है। इसलिए आप एक काम कीजिए, नमूने के रूप में अपने बायें कान को काट कर मेरे हाथ दे दीजिए, तो मैं उस का मिलान करके आपके दोनों कान आपके पास भिजवा दूंगा।"

जयपाल की शर्त को कान कटे व्यक्ति ने नहीं माना, तब राजा ने अपना फ़ैसला सुनाया कि कान कटे को उस का दूसरा कान देने की कोई जरूरत नहीं है।"

आखिर जयपाल ने राजा से निवेदन किया–"महाराज, मेरे पिताजी मरने के बाद एक मछली के रूप में पैदा हुए और वे मेरी नावों को चलाने में बड़ी मदद पहुँचा रहे थे, ऐसी हालत में इस मछुए के पिता ने बगुले के रूप में आकर मछली के रूप में रहने वाले मेरे पिताजी को निगल डाला, इसलिए मैंने उस बगुले को मार डाला। मछली के रूप में रहने वाले मेरे पिताजी का इस तरह स्वर्गवास न हुआ होता तो मैं इस नगर के समीप तक नहीं पटकता।"

जयपाल की बातें सुनकर राजा बहुत खुश हुए और उन्होंने अपना फ़ैसला सुनाया कि मछुए को भी हर्जाना देने की ज़रूरत नहीं है। इसके बाद जयपाल एक हफ़्ते तक राजा का मेहमान बन कर रहा, उनके द्वारा कई पुरस्कार पाकर अपनी चार नावों के साथ अपने देश को लौट आया।
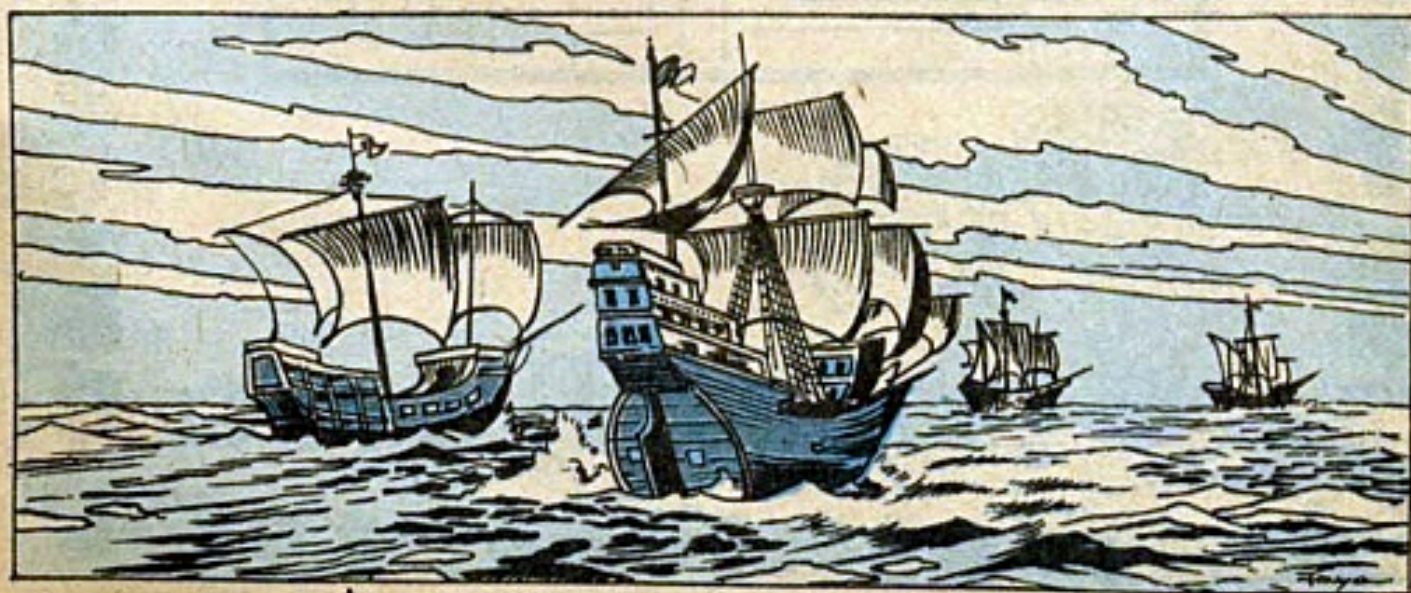
लापता टी.वी.
पिग्गी बैंक का मामला
केनरा बैंक ने राजू को एक टी. वी. पिग्गी बैंक दिया था और वह खो गया है।
उसको ढूँढ़ निकालने में क्या आप उसकी मदद कर सकते हैं?
केनरा बैंक
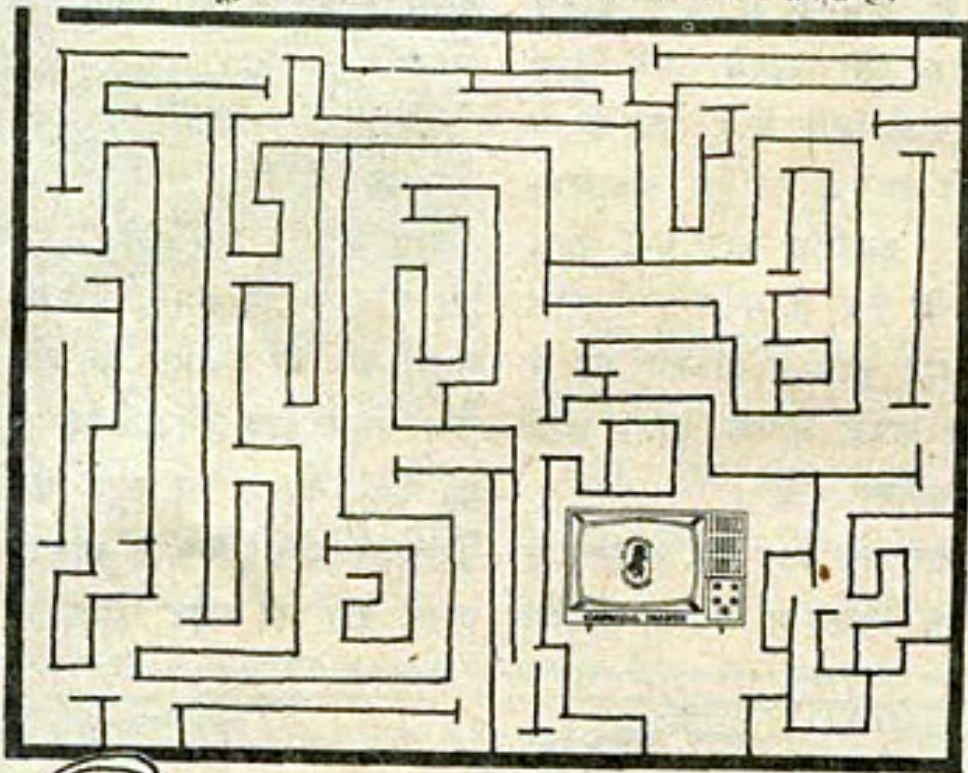
# केनरा बैंक की प्राकृतिक प्रश्नोत्तरी

1. ऊदबिलाव बाँध क्यों बनाते हैं?
2. साँप अपने खाल को क्यों झाड़ते हैं?
3. बिल्ली-परिवार के सभी जानवरों में एक ऐसा है, जो अपने नाखून अंदर नहीं खींच सकता। वह कौन-सा है?
3. कुछ मछलियाँ तैरना बंद करने पर भी डूबती नहीं हैं। कैसे?
5. मीठे पानी के कछुए और समुद्री कछुए के बीच क्या अंतर है?



आप एक नाबालिग हैं। तो क्या?
अपनी मम्मी या पापा से कहें कि केनरा बैंक में आपके लिए एक खाता खोल दें। अगर आप 14 वर्ष के हैं तो आप खाता खोल सकते हैं और परिचालन कर सकते हैं। आएं और उसका पूरा-पूरा मजा लें। मात्र रु 5/- के साथ आज ही आप शुरू कर सकते हैं।

**विद्यानिधि**

क्या आप डाक्टर, इंजीनियर, या वैज्ञानिक बनना चाहते हैं?

तो, विद्यानिधि उसका जवाब है। मम्मी और पापा से आज ही एक खाता खोलने के लिए कहें। आपकी उच्च पढ़ाई चिन्ता से मुक्त रहेगी।

**बालक्षेम**

होशियार बच्चे अपने सभी जेबी-पैसे खर्च नहीं कर देते। उनमें से थोड़ा वे केनरा बैंक के टी वी बॉक्स में रखते हैं। आप भी होशियार बनें। मम्मी और पापा से केनरा बैंक में एक बालक्षेम खाता खोलने के लिए कहें। टी वी बॉक्स में सिक्के डालना शुरू करें और अपने पैसे को बढ़ते हुए पाएं। आपके सभी सपने साकार होंगे।

# केनरा बैंक से मुफ्त स्टिक्कर्स

उन्हें, केनरा बैंक की उस शाखा से प्राप्त करें, जहाँ आपका एक बालक्षेम या नाबालिग खाता है।

**जवाब**

1. एक कृत्रिम ताल बनाने, जिसमें एक द्वीप बनाकर वे बसते हैं।
2. वे अपने खाल से अधिक बढ़ जाते हैं - साँप जिंदगी भर बढ़ते रहते हैं।
3. चीता।
4. उनके शरीर में हवा से भरे फुकने होते हैं जो उनको भारहीन बनाते हैं।
5. मीठे पानी के कछुए के आकार में काफी अंतर है और ये जल और थल दोनों में पाए जाते हैं।

**केनरा बैंक**

(एक राष्ट्रीयकृत बैंक)

# फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

**पुरस्कृत परिचयोक्तियां फरवरी १९८३ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।**

Devidas Kasbekar

Chandrapal Singh

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

---

## अक्तूबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : पानी नहीं, नहाऊँ कैसे!

द्वितीय फोटो : दूंगी पानी, लाओ पैसे!!

प्रेषक : शिव भगत राम, हरिजन विद्यालय, सदर बाजार, बैरकपुर, २४ परगना (प. बं.)

पुरस्कार की राशि रु. ५० इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

राजकुमारी मीना की मुस्कान
एक समय की बात है, दूर देश में एक राजा था. उसके पास ढेरों धन-दौलत थी. इज्जत और ताकत से राजा मालामाल था. पर... फिर भी राजा दुखी था.
राजा की लाड़ली बेटी राजकुमारी मीना बहुत सुंदर थी. पर उसके सुंदर चेहरे पर एक चीज़ न थी– एक सुंदर सी मुस्कान!
हर संभव प्रयास करके भी राजा, राजकुमारी के होंठों पर हंसी न ला सका. दुनिया भर का सुख...हर तरह का आराम, राजा ने अपनी लाड़ली बेटी के कदमों में डाल दिया पर फिर भी राजकुमारी के होंठ न मुस्कुरा सके. राजा चिन्तित हो उठा.
हारकर उसने एक एलान करवाया. देश-देश में ढिंढोरा पिटवा दिया गया कि जो व्यक्ति राजकुमारी मीना को हंसाएगा, उसे मुंहमांगा इनाम दिया जाएगा.
बूढ़े, जवान... हर किसी ने कोशिश की–राजकुमारी को हंसाने की. ढेरों उपहार– नयी–नयी भेंट लाई गईं, पर राजकुमारी न हंसी. एक दिन...एक नौजवान और खूबसूरत राजकुमार राजमहल में आया.
भरे दरबार में राजकुमारी को उसने भेंट दी. राजकुमारी ने बेमन से उसे लिया. लेकिन जब राजकुमारी ने उसे खोलकर देखा... उसकी आंखों में खुशी की चमक और होंठों पर हंसी दौड़ गई!
राजा यह देखकर खुशी से पागल हो उठा. देखने के लिए दौड़ा कि आखिर वह भेंट क्या थी? जानते हो राजा ने क्या देखा?
रावलगांव स्वीट्स, टॉफी और एकलेअर्स!
राजकुमारी बड़े मजे लेकर उनका स्वाद लूट रही थी. उसके चेहरे पर मुस्कान ही मुस्कान बिखरी पड़ी थी.
राजा ने खुश होकर, राजकुमार को गले लगाया. और कहा कि वह मांगे उसे इनाम में क्या चाहिए?
राजकुमार तो खूबसूरत राजकुमारी के प्रेम में फंस चुका था. उसने राजा से दो इनाम मांगे–
एक तो राजकुमारी का हाथ और दूसरे – रावलगांव स्वीट्स, टॉफी और एकलेअर्स...
कहानी कि उम्र भर राजकुमार और राजकुमारी के होंठ हंसते– मुस्कुराते रहें!
उत्तमता का स्वाद
Ravalgaon
Ravalgaon
Ravalgaon
स्वीट्स, टॉफी, एकलेअर्स
Creative Unit-5423 Hin.

पारले
'जब मैं बड़ी हो जाऊंगी न,
तो एक कमरा
गुड़ियों से भर दूंगी.
और दूसरा बिस्किटों से...'
PARLE
Gluco
PARLE
Gluco
बच्चों को भाये पारले ग्लूको–
स्वाद में निराले, शक्ति से भरपूर
पारले
ग्लूको
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट